कुरुक्षेत्र

उल्लास के क्षण [फोटो : मदनजीत]

कुरुक्षेत्र

सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन का मासिक मुखपत्र

वर्ष १] फ र व री १ ९ ५ ६ [अंक ४

विषय-सूची

आवरण चित्र [कलाकार : आर० शारङ्गन्]		
समस्या ! [व्यंग्य-चित्र]	सैमुअल	२
लोक सभा में बहस	...	३
गाँवों की सहकारी व्यवस्था	हर्षदेव मालवीय	१०
कुछ मूल समस्याएँ	के० सन्तानम	१२
आन्ध्र के किसानों की 'तीर्थ-यात्रा'	...	१३
कार्यकर्त्ताओं का प्रशिक्षण [चित्रावली]	...	१५-१८
हमारा भविष्य	ग्रेस लेंगले	१९
कुरनूल में विकास-कार्य [चित्रावली]	...	२१
लौकी की बेल	चक्रवर्ती राजगोपालाचारी	२२
सफ़ाई, सेवा के अभाव में	सावित्रीदेवी वर्मा	२४
दो गाँवों के विकास की कहानी	...	२७
सिर के दर्द की दवा	के० बालचन्द्रन्	३०
प्रगति के पथ पर	...	३१

सम्पादक :
केशवगोपाल निगम
[सहकारी सम्पादक, प्रकाशन विभाग]
उप-सम्पादक : *मनोहर जुनेजा*

मुख्य कार्यालय
ओल्ड सेक्रेटेरिएट,
दिल्ली—८

वार्षिक चन्दा २॥)
एक प्रति का मूल्य ।)

विज्ञापन के लिए
बिज़नेस मैनेजर, पब्लिकेशन्स डिवीज़न,
दिल्ली—८ को लिखें

समस्या !

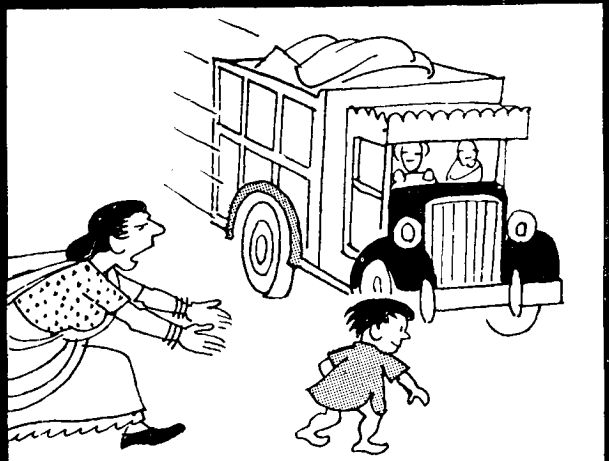

आरम्भ में बच्चा माँ की समस्या है

थोड़ा बड़ा हो कर वह पड़ोसियों को परेशान करता है

स्कूल पहुँचने पर वह मास्टर का सिर दर्द बन जाता है

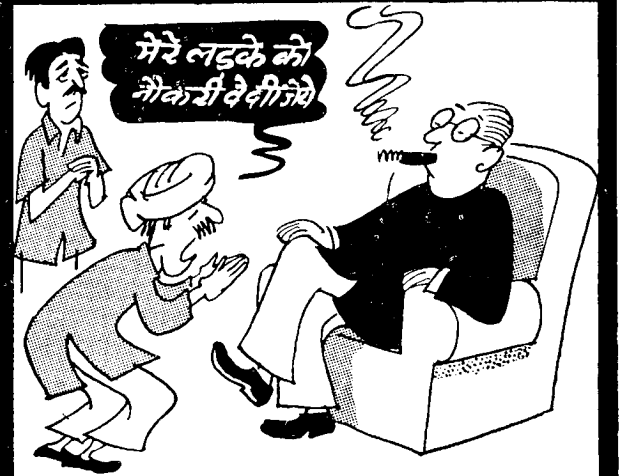

जब तक उसे नौकरी न मिल जाय बाप परेशान रहता है

जब तक शादी न हो जाय सारे घर में अशान्ति रहती है

और राजनीतिज्ञ बनने पर वह समस्त राष्ट्र की समस्या बन जाता है !

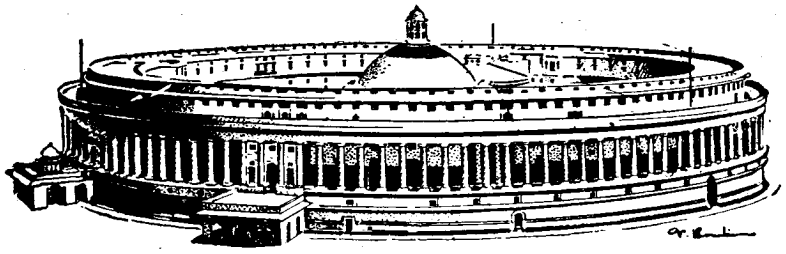

[यहाँ हम लोक सभा के पिछले अधिवेशन में सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं के कार्य का निरीक्षण करने के लिए एक समिति नियुक्त करने के ग़ैर-सरकारी प्रस्ताव पर दिए गए भाषणों के कुछ उद्धरण प्रस्तुत कर रहे हैं।]

कार्यकर्त्ता अयोग्य हैं

रघुवीर सहाय

मैं पहली पंचवर्षीय योजना के प्रशंसकों में से हूँ और यह भी भली भाँति जानता हूँ कि सामुदायिक विकास-योजनाएँ पंचवर्षीय योजना का सब से महत्वपूर्ण अंग हैं। अगर पंचवर्षीय योजना में से सामुदायिक विकास-योजनाओं को निकाल दें, तो हमारी योजना उस नाटक की तरह रह जाएगी जिससे नायक को हटा लिया गया हो। इसीलिए मैं पंचवर्षीय योजना और ख़ास तौर पर सामुदायिक विकास-योजनाओं को अत्यधिक महत्व देता हूँ। मूल्यांकन प्रतिवेदन में सामुदायिक विकास-योजनाओं के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला गया है। प्रतिवेदन के अनुसार —

> **सामुदायिक विकास-योजनाओं और विस्तार कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य जनता की सृजनात्मक प्रवृत्तियों को उभारना है ताकि वह स्वयं अपने परिश्रम और प्रयत्नों से और स्वयं अपनी संस्थाओं की सहायता से अपने सामाजिक जीवन को अधिक परिपूर्ण और प्रगतिशील बना सके। हमारा लक्ष्य मुख्यतः सांस्कृतिक और नैतिक है, हालाँकि इसका एक आधार और तत्व भौतिक भी है।**

हमें देखना यह है कि इन सामुदायिक विकास-योजनाओं ने अपेक्षित सांस्कृतिक और भौतिक उद्देश्यों की प्राप्ति में कहाँ तक सफलता प्राप्त की है। जहाँ तक भौतिक क्षेत्र का सम्बन्ध है, निस्सन्देह उन सामुदायिक विकास-योजनाओं में, जिनमें से कुछ में पिछले तीन साल से और कुछ में पिछले दो साल से काम हो रहा है, कुछ महत्वपूर्ण इमारतें ज़रूर बनाई गई हैं। यह भी सत्य है कि अच्छी किस्म के बीज और खाद भी काफ़ी बड़ी मात्रों में गाँवों में बाँटे गए हैं। कुछ सामुदायिक विकास क्षेत्रों में ईंटों के भट्ठे भी लगाए गए हैं जो इन क्षेत्रों के लिए बिलकुल नई चीज़ है। कुछ गाँवों में पक्की गलियाँ बनाई गई हैं और पक्की नालियों का प्रबन्ध भी किया गया है। पुराने कुओं की मरम्मत की गई है और कुछ नए कुएँ भी खोदे गए हैं। इसके अतिरिक्त भी कुछ

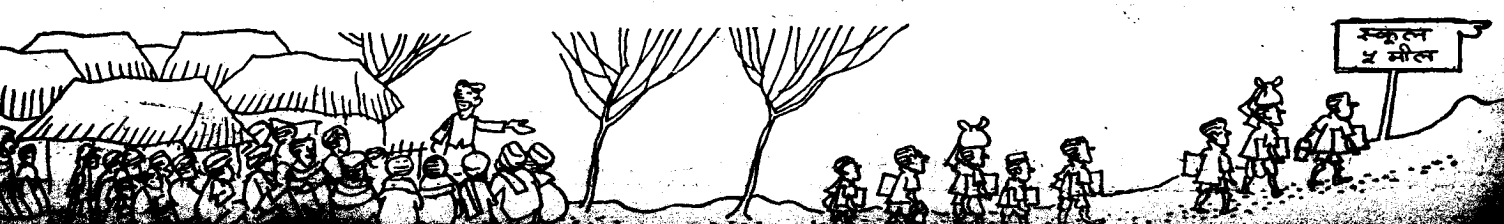

चीज़ें रह गई होंगी, जिनका उल्लेख मैंने न किया हो। लेकिन मेरे कहने का उद्देश्य यह है कि इस क्षेत्र में हमने जो कुछ भी किया है, वह समुद्र में एक बिन्दु मात्र है। एक सामुदायिक योजना-क्षेत्र में लगभग १५० गाँव होते हैं। मेरे ज़िले में उसव-जलालाबाद का सामुदायिक योजना-क्षेत्र है जिसमें ७५ गाँव बदायूँ के और ७५ शाहजहाँपुर के शामिल हैं। मेरा ख्याल है कि भौतिक क्षेत्र में जो कुछ हुआ है उसका असर कुछ ही गाँवों पर पड़ा है, अधिकतर गाँव तो अभी अछूते ही हैं।

अच्छे बीजों और कृत्रिम खाद से क्या लाभ हो सकता है जब तक सिंचाई के पर्याप्त साधन न हों? भले ही हम बेहतर किस्म के बीज इस्तेमाल करें या अच्छी किस्म की खाद का प्रयोग करें, सिंचाई के साधनों का होना अनिवार्य है। मैं अपने अनुभव से कह सकता हूँ कि जिस विकास-योजना से मेरा निकटतम सम्बन्ध है, उसमें सिंचाई के साधन बढ़ाने के लिए कोई उल्लेखनीय प्रयत्न नहीं किया गया। दूसरी बात मैं यह कहना चाहता हूँ कि किसी सामुदायिक विकास योजना या राष्ट्रीय विस्तार खण्ड में तब तक अच्छे ढंग से कार्य नहीं हो सकता जब तक वहाँ संचार के अच्छे साधन न हों। मैं अपने योजना क्षेत्र के अनुभव से कह रहा हूँ कि न तो सिंचाई के साधनों के विकास पर ज़ोर दिया गया है और न ही संचार के साधनों पर। मेरे योजना-क्षेत्र का प्रधान कार्यालय ज़िले के प्रधान कार्यालय से २५–३० मील की दूरी पर है। हरेक को योजना-क्षेत्र के प्रधान कार्यालय तक पहुँचने में अत्यधिक कठिनाई होती है। जब तक आवागमन के साधन नहीं होंगे, कोई भी सरलता से प्रधान कार्यालय नहीं पहुँच सकता और इसके कार्य की जाँच-पड़ताल नहीं हो सकती।

अगर हम सांस्कृतिक और नैतिक बातों पर दृष्टि डालें, जिन पर मूल्यांकन प्रतिवेदन में ज़ोर दिया गया है, तो हमें बिलकुल निराश होना पड़ेगा। अगर हम में एक अच्छे उद्देश्य को लेकर ज़ोर-शोर से काम करनेवाले की भावना होती और हम केवल भौतिक उद्देश्यों की प्राप्ति पर ही ज़ोर न देकर सांस्कृतिक उद्देश्य भी सामने रखते, तो अब तक गाँववालों की मनोवृत्ति में दिन-रात का अन्तर आ चुका होता। मैंने उनको वैसा ही पाया है जैसा कि वे सामुदायिक विकास-योजना के आरम्भ होने से पूर्व थे। उनके रहन-सहन के ढंग में लेशमात्र भी अन्तर नहीं आया है। उनकी किसी भी असामाजिक आदत में सुधार नहीं हुआ है। सामुदायिक विकास-योजना के अन्तर्गत आनेवाले गाँवों के लोगों में अपने बच्चों को स्कूल भेजने तक का चाव नहीं है। विकास-कार्य में योगदान देने का शौक उनमें बिलकुल नहीं है। इसलिए जहाँ तक सांस्कृतिक और नैतिक बातों का सम्बन्ध है, उन पर किसी का ध्यान नहीं गया है। कुछ भौतिक लक्ष्यों की प्राप्ति करके ही हमें सन्तोष करते हुए यह नहीं समझना चाहिए कि सामुदायिक विकास-योजना हर क्षेत्र में प्रगति कर रही है। अगर ऐसी कुछ भावना है तो उसे हमें दूर करना ही होगा, हमें वास्तविकता का मुकाबला करना चाहिए।

गाँव सभाओं को ही लीजिए। हम जानते हैं कि सामुदायिक विकास-योजनाओं में लगे हुए कर्मचारियों की संख्या काफ़ी है। परन्तु क्या ये सब कर्मचारी गाँववालों में वह भावना पैदा करने में सफल होंगे जो विकास-योजनाओं के लिए आवश्यक है? इन सब के लिए यह तब तक सम्भव नहीं, जब तक गाँव सभाएँ सामुदायिक विकास-योजनाओं में पूर्ण रूप से भाग नहीं लेतीं। मेरा अनुभव है कि आज गाँव सभाएँ उतनी ही शिथिल हैं जितनी कुछ वर्ष पूर्व थीं। वे विकास-योजनाओं में बिलकुल रुचि नहीं ले रहीं। वे अपनी तरफ़ से कोई सुझाव पेश नहीं करतीं। अगर कोई सुझाव उनके

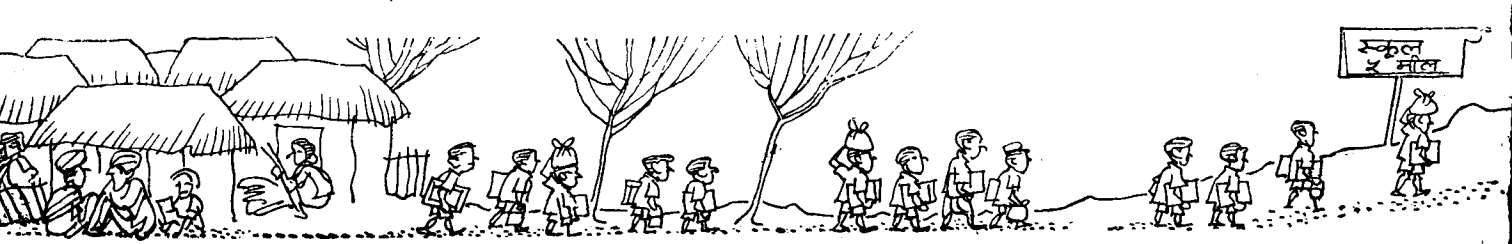

सामने रखा भी जाए तो उस पर विचार करने के लिए शायद लोग भी इकट्ठे न हों। गाँव सभाओं का तो यह हाल है। जब तक गाँव सभाएँ कार्य क्षेत्र में नहीं कूद पड़तीं, हमारी सामुदायिक विकास-योजनाएँ कभी भी प्रगति नहीं कर सकतीं।

योजना सलाहकार समितियाँ हैं, जिनका कार्य सामुदायिक विकास-योजनाओं की देख-रेख करना है। विकास-योजनाओं के सम्बन्ध में इन पर बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी है। मैं मानता हूँ कि ये समितियाँ बहुत ही महत्वपूर्ण हैं, परन्तु प्रश्न यह है कि इन्होंने अब तक किया क्या है? मूल्यांकन प्रतिवेदन ने भी इनको बिलकुल बेकार घोषित किया है।

इसके बाद ज़िला योजना समितियों को ही लीजिए। ये इस शृंखला की ऊपरी कड़ियों में से एक हैं। मैं अब तक यह नहीं जान पाया कि इन समितियों के कर्तव्य क्या हैं और आज तक इन्होंने किया क्या है? मैं भी अपने ज़िले की योजना समिति का सदस्य हूँ। मैं योजना सलाहकार समिति का भी सदस्य हूँ। अगर मेरे अनुभव का कोई महत्व है तो मैं कह सकता हूँ कि ये दोनों संस्थाएँ बिलकुल बेकार साबित हुई हैं। हमें इस चीज़ की जाँच-पड़ताल करनी होगी कि ये संस्थाएँ क्यों हमारी आशाओं से कम काम कर रही हैं। मेरा व्यक्तिगत मत तो यह है कि हमारे कार्यकर्त्ताओं का चुनाव ठीक नहीं है—कम से कम जो कार्यकर्त्ता आजकल काम कर रहे हैं, सामुदायिक विकास जैसे महत्वपूर्ण काम को करना उनके बस की बात नहीं।

प्रतीत होता है कि मूल्यांकन प्रतिवेदन और अन्य उन प्रतिवेदनों में, जिनमें सामुदायिक विकास-योजनाओं की जाँच-पड़ताल का विवरण है, यह बात आरम्भ में ही मान ली गई है कि क्योंकि ज़िला मजिस्ट्रेट ज़िले की विकास-योजनाओं का मुखिया है, इसलिए सब काम अच्छी तरह चल रहा है। इससे बड़ी भ्रमणपूर्ण धारणा और कोई नहीं है। मेरा अनुभव और राय यह है कि इस कार्य के लिए ज़िला मजिस्ट्रेट से बढ़ कर अयोग्य अन्य कोई व्यक्ति नहीं है। वे लोग इस काम से पूरी तरह परिचित नहीं हैं। अब भी हमारी जनता और हमारी सरकार उसी ढंग से सोच-विचार करती है जिस ढंग से वह बीस साल पहले किया करती थी। हमें किसी प्रकार इस घातक धारणा से छुटकारा पाना ही होगा—ज़िला मजिस्ट्रेट पर ज़िले का विकास कार्य छोड़ कर हमें यह नहीं समझ लेना चाहिए कि सब काम ठीक ढंग से चल रहा है।

मैंने यह प्रस्ताव इसलिए नहीं रखा है कि मैं सरकार की गतिविधियों को सन्देह की दृष्टि से देखता हूँ। सच तो यह है कि पहली पंचवर्षीय योजना बना कर सरकार ने अपने नेक इरादों को ही ज़ाहिर किया है। सरकार पूरे ज़ोर-शोर से इस योजना को सफल बनाने की कोशिशें भी कर रही है। इसलिए भौतिक, नैतिक अथवा सांस्कृतिक, जिस क्षेत्र में भी हमें असफलता हुई है उसका मुख्य कारण अयोग्य कार्यकर्त्ताओं का चुनाव है। और जब तक हम इस दोष को दूर करने की कोशिश नहीं करते, हमारी सामुदायिक विकास-योजनाएँ आशातीत सफलता प्राप्त नहीं कर सकतीं।

मुझे कार्यक्रम पर गर्व है

बी० के० दास

विभिन्न राज्यों में होनेवाले सामुदायिक विकास-कार्य की जाँच-पड़ताल करने के लिए एक सामति नियुक्ति करना मेरे ख्याल में बहुत आवश्यक है। लेकिन इस सम्बन्ध में अब तक जो कुछ कहा गया है, मैं उससे पूर्णतया सहमत नहीं हूँ। स्वतन्त्रता के बाद अगर भारत सरकार ने कोई

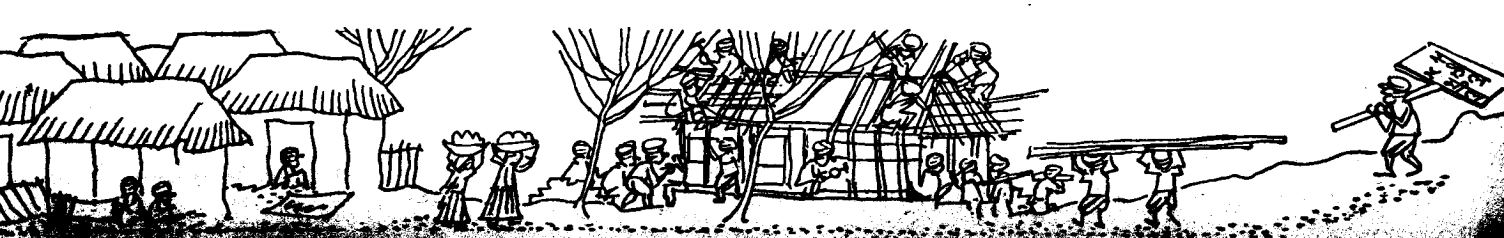

ऐसा कार्य किया है जिससे जन सामान्य को लाभ पहुँचा है, तो वह है सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं का प्रसार।

मैं पिछले दो-तीन सालों में संसार के विभिन्न हिस्सों में घूमा हूँ। मुझे एक विश्व सभा में इ। संसद् का प्रतिनिधित्व करने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ है। मैं कई संसद् सदस्यों से मिला हूँ और कई सभाओं में भाषण देने का अवसर भी मुझे मिला है। मैंने आयरलैंड में भी, जहाँ की स्थिति हमारे देश जैसी है, होनेवाले ग्राम-विकास कार्य को देखा है। यह सब कुछ देखने के बाद मैं कह सकता हूँ कि मुझे अपने देश पर गर्व है। मुझे अपने देश की सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों में सरकार द्वारा किए गए कार्य पर भी गर्व है।

देश से बाहर जहाँ भी मैं गया हूँ मैंने लोगों को इन सामुदायिक विकास-योजनाओं की प्रशंसा करते पाया। उन सब का यह कथन है कि भारत सरकार का इस कार्यक्रम द्वारा दरिद्रता को जड़ से मिटा देने का प्रयत्न वास्तव में प्रशंसनीय है। इस योजना द्वारा सरकार भारत के गाँवों तक पहुँच रही है और गाँववालों की दशा सुधारने में प्रयत्नशील है।

हमारे सामने उस गाँव का दृष्टान्त है जहाँ पीने के पानी के लिए लोगों को दो मील से भी अधिक चलना पड़ता था। जब ग्रामसेवक ने उनसे पूछा कि उनकी सब से बड़ी ज़रूरत क्या है तो सब ने कहा—"पानी"। भूमि और श्रम स्वयं उन्होंने दिए, योजना अधिकारियों और कार्यकर्त्ताओं से आर्थिक और प्रौद्योगिक सहायता प्राप्त की। फलस्वरूप एक नलकूप तैयार कर लिया गया या पीने के पानी का अन्य प्रबन्ध कर लिया गया। गाँव की ज़िन्दगी ही बदल गई है। लोगों में नई आशा और यह विश्वास पैदा हो गया है कि आपसी सहयोग से वे अपनी दशा सुधारने में काफ़ी सफल हो सकते हैं। यह आशा और विश्वास सहयोग के अन्य क्षेत्रों में भी प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर हो रहे हैं। जहाँ भी यह कार्यक्रम चल रहा है, लोगों में एक नई जागृति और नई आशा दिखाई देती है।

मैं यह बात मानने से इंकार नहीं करता कि कुछ स्थानों पर वे कार्यकर्त्ता जिन पर इस कार्य के नेतृत्व का भार है, अपने कार्य में असफल रहे हैं। परन्तु इस चीज़ को तो उन कार्यकर्त्ताओं के स्थान पर दूसरों को नियुक्त करके दूर किया जा सकता है। अगर हम यह कहें कि इस कार्यक्रम से हमें कोई लाभ नहीं पहुँचा या हमारे सभी प्रयास असफल हुए हैं या हमें इस काम को हाथ में लेना ही नहीं था, तो हमारी भूल होगी। हमें तो साहस और विश्वास से आगे बढ़ना है और हमारे कार्यक्रम में जो भी कमियाँ हैं, उन्हें दूर करना है।

साहस खोने की आवश्यकता नहीं

सुरेशचन्द्र

यह सम्भव है कि किन्हीं खण्डों और क्षेत्रों में जो कुछ हमें करना था, हम करने में असफल रहे हैं और शायद इसका कारण उन खण्डों के अधिकारी हैं जिनकी लापरवाही या अन्य कमज़ोरियों के कारण काम में हर्ज हुआ है। लेकिन अगर विशेष खण्डों को सामने न रखा जाए और सारे कार्यक्रम की प्रगति को आँका जाए, तो हमने वास्तव में काफ़ी प्रगति की है। जब गान्धी जी राजनीतिक क्षेत्र में आए तो उन्होंने हमारा ध्यान गाँवों की तरफ़ आकर्षित किया, उन्होंने सारी कांग्रेस संस्था को ही ग्रामवासी बनाना चाहा। गान्धी जी के नेतृत्व में कांग्रेस जैसी बड़ी

संस्था तक हमारे गाँवों में जागृति लाने में अधिक सफल नहीं हुई थी, इसलिए जिस प्रकार की सरकारी व्यवस्था हमारे पास है, उससे अधिक आशा नहीं की जा सकती। इसलिए मेरा ख्याल है कि हमें अपने कार्यक्रम का कई दिशाओं में संशोधन करना चाहिए और कुछ दिशाओं में अधिक उत्साह से काम करके दोष दूर करने के लिए हर सम्भव प्रयत्न करना चाहिए।

गाँव में हमें किसी लम्बी-चौड़ी चीज़ का निर्माण तो करना नहीं है—बड़ी इमारतों या राजपथों की हमें वहाँ आवश्यकता नहीं है। हमें ग्रामवासियों का मानसिक पुनर्निर्माण करना है। हमें उनमें आत्म-विश्वास की भावना पैदा करनी है।

संसद् सदस्य होने के नाते मैं एक ज़िला योजना समिति का भी सदस्य हूँ। मेरा अनुभव है कि ये समितियाँ बिलकुल बेकार सिद्ध हुई हैं। हमें बैठक की सूचना ही नहीं मिलती, अगर मिलती भी है तो उस बैठक के कार्यक्रम की पूर्व-सूचना नहीं दी जाती। सच तो यह है कि हमें इन समितियों के कर्तव्यों और अधिकारों का भी ज्ञान नहीं है और इसलिए हम उनको प्रभावशाली बनाने के लिए भी कुछ नहीं कर सकते।

पिछली बार जब मैं अपने चुनाव-क्षेत्र में गया तो मैं एक विस्तार सेवा खण्ड देखने भी गया। मुझे यह जान कर बहुत दुःख हुआ कि रुपए की मंजूरी मिल जाने पर भी कुछ अधिकारी दौड़-धूप अवश्य कर रहे थे, परन्तु वास्तव में कुछ काम नहीं हुआ था। हालाँकि जनता ने सड़क निर्माण के लिए रक़म और श्रम-दान पहले ही दे दिया था। रुपया कलक्टर को दिया जा चुका था, लेकिन काम कुछ भी नहीं हो सका था क्योंकि ज़िला योजना समिति के प्रधान और अन्य लोग कोई न कोई बहाना बना देते थे। कभी कह देते टेक्नीकल सहायता की प्रतीक्षा कर रहे हैं, कभी इंजीनियर पूरे नहीं हैं, कभी यह चीज़ पूरी नहीं है, कभी वह चीज़ पूरी नहीं है।

विकेन्द्रीकरण आवश्यक है

एन० एम० लिंगम

अक्सर ऐसा कहा जाता है कि हमारी अनेक योजनाओं के फलस्वरूप देश में एक मूक क्रान्ति हो रही है। इन योजनाओं में सब से अधिक महत्वपूर्ण हैं सामुदायिक विकास-योजनाएँ और राष्ट्रीय विस्तार सेवाएँ। मैं इस बात से सहमत हूँ कि कार्यक्रम के उद्देश्य बड़े विस्तृत हैं। परन्तु इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जिस प्रकार की व्यवस्था व अन्य सुविधाओं की आवश्यकता है, उनका नितान्त अभाव है। सामुदायिक विकास-योजना का उद्देश्य जनता की सृजात्मक शक्तियों को प्रोत्साहन देना है। सुनने में उद्देश्य तो काफी ऊँचा प्रतीत होता है परन्तु वास्तव में गाँवों में और देहाती इलाकों में हो क्या रहा है? सामुदायिक विकास खण्डों और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों का उद्देश्य कृषि, आरोग्य, सार्वजनिक-स्वास्थ्य, सड़कों, सहकारिता, दस्तकारी, पशु-चिकित्सा, सांस्कृतिक कार्यक्रम और देहातों में कैम्प लगाने के सम्बन्ध में जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। सामुदायिक विकास खण्डों के ये मुख्य कार्य हैं। लेकिन जब हम इस तथ्य का विश्लेषण करते हैं कि इन कार्यों को करने के लिए हमारी व्यवस्था क्या है, तो हमें कई दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। सरकार के विभिन्न विभागों में खींचातानी रहती है। जनता में उत्साह पैदा करने की कोशिश नहीं की जाती, फलस्वरूप जनता आन्दोलन में पूरी तरह सहयोग नहीं देती। अगर जन-सामान्य इस

आन्दोलन में सहयोग न दे तो तो इस आन्दोलन को आन्दोलन कहना ही बेकार है। परन्तु जन सामान्य इससे अलग क्यों रहता है? इसलिए कि यह कार्यक्रम ज़िला मजिस्ट्रेट की देखरेख में सरकार का एक अतिरिक्त विभाग बन कर रह गया है।

इसमें दोष ज़िला मजिस्ट्रेटों का नहीं है। उनमें भी उतनी ही मानवता है जितनी हम में है। उनमें भी हमारी तरह राष्ट्र-सेवा की भावना है। परन्तु जिस व्यवस्था के अन्तर्गत वे काम कर रहे हैं, वह प्रभावहीन है। पहले अब की अपेक्षा ज़िला मजिस्ट्रेटों को बहुत कम काम करना पड़ता था। स्वतन्त्रता से पूर्व उनकी ज़िम्मेवारी केवल शान्ति और व्यवस्था बनाए रखने तक सीमित थी। उस समय ज़िला मजिस्ट्रेट आई० सी० एस० के उच्चतम अफ़सरों में से कोई हुआ करता था। एक सामान्य आई० सी० एस० १५ साल तक नौकरी करने के बाद ही क्लक्टर नियुक्त होता था। लेकिन अब नए-नए अफ़सरों को ज़िले में ऊँचे-ऊँचे पदों पर नियुक्त कर दिया जाता है। वे वास्तव में ज़िले के प्रशासक होते हैं और उन्हें हर तरह के काम सौंप दिए जाते हैं। उनके पास सिर्फ रोज़मर्रा की दफ्तरी मीटिंगों में भाग लेने के लिए समय होता है। गाँवों में लोगों के आन्दोलन का नेतृत्व करने का उन्हें अवकाश नहीं। वे लोगों से मिल भी नहीं पाते। फलतः यह आन्दोलन निष्प्राण होता जा रहा है। जहाँ जहाँ भी यह कार्यक्रम चालू है, वहाँ यह क्लक्टर के दफ्तर का एक विभाग मात्र बन कर रह गया है। अगर हम लोगों की सृजनात्मक प्रवृत्ति जाग्रत करना चाहते हैं और कार्यक्रम का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाना चाहते हैं तो मेरे विचार में इस कार्यक्रम को आधुनिक प्रशासन-व्यवस्था से बिलकुल अलग करना होगा।

छोटे-छोटे क्षेत्र चुन कर उनमें भरपूर विकास करने के लिए विस्तार अधिकारी नियुक्त करना पर्याप्त नहीं होगा। सारे ज़िले में काफ़ी विस्तार अधिकारियों की नियुक्ति करनी चाहिए और इसका सर्वोत्तम तरीका है ज़िला अधिकारियों को ही विस्तार अधिकारी बना देना। इसका मतलब यह होगा कि योजना सलाहकार समिति केवल सलाहकार के रूप में ही काम नहीं करेगी। इसका कानूनी अस्तित्व होना चाहिए। मूल्यांकन प्रतिवेदन ने भी इनको बेकार बताया है। इसलिए संसद् सदस्यों और विधान सभाओं के सदस्यों को इनसे सम्बद्ध करने का अभिप्राय अगर इनको अधिक प्रभावपूर्ण बनाना है, तो इनको कानूनी अस्तित्व प्रदान किया जाए ताकि इसके फ़ैसलों पर विकास-कार्यकर्त्ता अमल करें। अब सदस्य लोग बहस में भाग लेते हैं और विचारों का आदान-प्रदान भी काफ़ी होता है, परन्तु काम अन्ततः क्लक्टर की इच्छा अनुसार ही होता है। जिस वातावरण में आजकल विकास खण्डों में काम हो रहा है, उसको पूर्णतया बदल कर सारी व्यवस्था को ग़ैर-सरकारी रूप देना होगा।

इसके बाद स्थानीय संस्थाओं जैसे ज़िला बोर्ड और पंचायतों की बारी आती है। सामुदायिक विकास खण्डों में जिन कामों पर ज़ोर दिया जाता है—जैसे जनस्वास्थ्य, पानी की समस्या, सड़कों का प्रश्न, पाठशालाएँ आदि उनकी देख-रेख दो संस्थाएँ करती हैं। एक ओर ज़िला बोर्ड और पंचायतें होती हैं तो दूसरी ओर राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड। दोनों में आपस में खींचातानी रहती है। ज़िला बोर्डों के पास काम करने के लिए पर्याप्त कर्मचारी होते हैं, परन्तु पैसे की कमी रहती है। उनके पास ज़िला इंजीनियर, ज़िला स्वास्थ्य अधिकारी और अन्य कर्मचारी होते हैं लेकिन सड़कें बनाने, नए स्कूल और अस्पाल खोलने आदि के लिए पर्याप्त पूंजी नहीं होती। विकास कार्यक्रम संस्था के पास पैसा है, परन्तु कर्मचारियों का अभाव है। अगर किसी को किसी कार्य पर व्यय होनेवाली रकम का अन्दाज़ा लगाना होता है तो उसे डिवीज़नल इंजीनियर के पास जाना पड़ता है जो ज़िला बोर्ड के आधीन होता है। डिवीज़नल इंजीनियर अपने किसी ओवरसीयर को यह काम सौंप देता है। ओवरसीयर इस काम में महीने और कई बार वर्ष लगा देता है। क्योंकि ओवर-

सीयर विकास-योजना अथवा विकास अधिकारी के आधीन न होकर डिवीज़नल इंजीनियर के नीचे होता है, काम में ज़रूरत से ज्यादा देर लगती है।

मैंने इस सब का ज़िक्र केवल यह सिद्ध करने के लिए किया कि आपसी सहयोग का नितान्त अभाव है। अगर योजना सलाहकार समितियों को हमें प्रभावशाली बनाना है और इस आन्दोलन में नई जान फूँकनी है, तो ज़िला अधिकारियों को विस्तार अधिकारी बना दिया जाए, और योजना सलाहकार समितियों को कानूनी संस्था बनाकर ज़िला अफ़सरों को उस संस्था की देखरेख में काम करने दिया जाए। जब तक यह विकेन्द्रीकरण नहीं किया जाता, हमें कार्यक्रम में अधिक सफलता नहीं मिल सकती।

योजना का विस्तार जनता करे

एस० एल० सक्सेना

सामुदायिक विकास-योजनाओं पर हम अपार पूंजी लगा रहे हैं और दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक सारे देश में इनका जाल बिछ जाएगा। मैं इसका स्वागत करता हूँ। गाँवों के लोगों ने भी इस कार्यक्रम का स्वागत किया है। इसकी उन्हें ज़रूरत है। इसलिए यह कहने की बजाए कि इससे कोई लाभ नहीं, हमें इसमें सुधार करने की कोशिश करनी चाहिए। हमें इस चीज़ की जाँच-पड़ताल करनी चाहिए कि कार्यक्रम को किस प्रकार अधिक प्रभावशाली बनाया जाए और इसमें कहाँ-कहाँ सुधार किया जाए। मेरे ख्याल में कोई ऐसा तरीका निकाला जाए जिससे सलाहकार समिति में जनता द्वारा चुने गए लोग हों। संसद् सदस्यों और विधान सभा के सदस्यों के अतिरिक्त खण्डों के चुने हुए प्रतिनिधि इन समितियों के सदस्य बनाए जाएँ। दूसरी आवश्यक बात यह है कि योजना का कार्यक्रम जन-सामान्य को भी पूरी तरह मालूम हो, योजना का विस्तार जनता द्वारा हो।

पंचायतों को मज़बूत बनाओ

के० एस० राघवाचारी

मैं ग्राम सुधार चाहता हूँ। मैं स्वयं एक गाँव में रह रहा हूँ और मैंने खेतों में समय बिताया है। मद्रास राज्य में 'फिरके' हैं। मिले-जुले मद्रास राज्य की सरकार ने राज्य में एक विकास कार्यक्रम आरम्भ किया था। इसके पश्चात् राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सामुदायिक विकास-योजनाओं आदि का जन्म हुआ। इन योजनाओं के सम्बन्ध में सब से निराशाजनक बात यह है कि सरकार द्वारा स्वीकृत पूंजी भी प्रायः समय पर उपलब्ध नहीं होती, स्वयं सरकार ने भी इस बात को माना है।

इसके अतिरिक्त ख़ास बात यह है कि हमने अधिक प्रगति भी नहीं की है। इस कार्यक्रम को शुरू हुए तीन-चार साल होने को आए। इस अवधि में गाँवों में एक नई हलचल-सी दिखाई देनी चाहिए थी। सब से बड़ी कठिनाई यह है कि यह कार्यक्रम ऊपर से निर्देशित है, जैसे रेलवे कन्ट्रोलिंग रूम से गाड़ियों के आने-जाने पर नियन्त्रण रखा जाता है। क्षेत्रों में काम करनेवाले लोगों की इसमें ज़रा भी सुनवाई नहीं है। रुपया व्यय किया जाता है, परन्तु परिणाम कुछ भी नहीं निकलता। मैं सारे देश के सम्बन्ध में तो नहीं कह सकता, परन्तु एक स्थान विशेष की बात अवश्य जानता हूँ। मैं 'स्थायी पुलाक न्याय' में विश्वास करता हूँ—अगर बर्तन का एक दाना भी गलने से रह गया, तो बर्तन के सारे दाने नहीं गले।

अगर गाँवों का हम वास्तव में सुधार चाहते हैं, तो हमें ग्राम पंचायतों को मज़बूत बनाना होगा, उनको पूंजी देनी होगी ताकि वे कुछ उपयोगी काम कर सकें।

गाँवों की सहकारी व्यवस्था

हर्षदेव मालवीय

कोई ज़माना था जब हमारे देश में गाँवों की लूट से, गाँवों की बदौलत शहरों को बढ़ाया जाता था, शहरों की तरक्की की जाती थी। पर अब ज़माने की रफ्तार उलट रही है। स्वतन्त्रता के बाद क्या दिल्ली की केन्द्रीय सरकार और क्या अलग-अलग प्रदेशों की सरकारें, सब ही गाँवों के विकास और गाँवों की तरक्की को पहला स्थान देने लगी हैं।

गाँव की उन्नति के लिए जहाँ सरकारी कानूनों का बड़ा महत्व है, जैसे ज़मींदारी प्रथा का खत्म करना, बेदखलियों को बन्द करना, लगान की दरों को तय करना वगैरह, वहाँ यह भी एक अटल सत्य है कि जब तक गाँववाले खुद नहीं जागते और अपनी भलाई के कामों को अपने हाथों में नहीं लेते, तब तक अच्छा से अच्छा, बढ़िया से बढ़िया कानून भी उनकी सहायता नहीं कर सकता। इधर हमारे गाँववालों ने इस बात को अच्छी तरह से समझ लिया है और यही कारण है कि हम आए दिन देखते हैं, अख़बारों में पढ़ते हैं और रेडियो पर सुनते हैं कि हमारे ग्राम्य बन्धु कहीं किसी विकास-योजना का काम पूरा कर रहे हैं तो कहीं अपनी मेहनतमशक्कत से सड़कें बनाते हैं, तालाब खोदते हैं, इत्यादि।

गाँवों के इस विकास कार्य में वहाँ की सहकारी व्यवस्था के विकास का विशेष महत्व है। आजकल के ज़माने में हमारे कालेजों में सहकारिता पर बड़े-बड़े प्रोफेसरों के लेक्चर होते हैं, उस पर बड़ी-बड़ी किताबें लिखी गई हैं, पर अगर वास्तव में देखा जाए तो हमारे गाँवों में सहकारी तरीकों से काम करने की व्यवस्था बड़ी पुरानी है। हाँ, यह ज़रूर है कि गुलामी के ज़माने में जहाँ हम और बहुत सी अपनी पुरानी अच्छी बातों को भूल गए, वहाँ हम इसे भी भुला बैठे।

सहकारिता का आखिर मतलब क्या है? बुनियादी तौर से इसका मतलब यही है कि गाँव के रहनेवाले एक दूसरे की सहायता करते रहें, एक दूसरे को मदद दें, एक दूसरे के काम आवें। इस प्रकार आपस के सब झगड़े खत्म होते हैं, आपस में प्रेमभाव बढ़ता है और गाँव का जीवन मधुर और सुव्यवस्थित होता है।

पर आज एटम का ज़माना है और इस ज़माने में सब काम संगठित तरीके से किए जाते हैं। इसी लिए सहकारिता के क्षेत्र में अब संगठित रूप से ही काम करना ज़रूरी हो गया है और यह ज़रूरी भी है। संगठित रूप से जो काम किया जाता है उसके नतीजे अच्छे होते हैं और जल्दी प्राप्त होते हैं। असंगठित रूप से कार्य करने का वैसा फल नहीं होता, वहाँ सबकी अपनी-अपनी ढपली और अपना-अपना राग होता है।

गाँवों में सहकारिता के आजकल कई रूप हैं। आजकल हम कई तरह की सहकारी या कोआपरेटिव सोसाइटियाँ पाते हैं। सबसे पुरानी सोसाइटियाँ तो वे हैं जो अंग्रेज़ी ज़माने में ही शुरू हो गई थीं और जिनका मुख्य काम गाँववालों को सस्ती दरों पर उधार देना था। उस ज़माने में ज़रूर ऐसी सोसाइटियों से गरीब किसानों की सूदखोर महाजनों से कुछ रक्षा हुई, पर अव्वल तो ऐसी सोसाइटियों की संख्या बहुत कम थी, दूसरे उनके काम-धाम के तरीकों में बड़ी ही शिथिलता और खराबियां थीं, इसलिए वे ज्यादा कारगर साबित न हुईं।

बाद में एक दूसरे प्रकार की सहकारी समितियाँ बनने लगीं। इनका मक़सद यह था कि किसानों की ज़रूरत की चीज़ों को गाँव की सहकारी समिति स्वयं खरीदे और अपने सदस्यों को दे। इसका लाभ यह हुआ कि ज़रूरी चीज़ों को खरीदने में शहरों के बाज़ारों में या देहातों के बड़े-बड़े बाज़ारों में किसानों का लूटा जाना, उनसे एक के तीन दाम वसूल किया जाना बन्द हो गया और उनको सस्ती दरों पर ही सामान प्राप्त होने लगा।

ऐसी खरीद करनेवाली सहकारी सम्मतियों के साथ ही किसानों की पैदावार को बेचने के लिए भी समितियाँ बनने लगीं। अक्सर तो खरीद व बेच का काम एक ही सहकारी समिति द्वारा किया जाने लगा और बिलकुल साफ़ हो गया कि एक नहीं अनेक मानों में किसानों की पैदावार को बेचने के लिए बनाई गई समितियाँ उनके लिए बहुत ही हितकर हैं। पहले किसान अपनी बैलगाड़ियों पर गल्ला लाद कर मंडियों को जाता था। रास्ते में उसे अपना और बैलों का खर्च उठाना पड़ता, फिर उसे मंडियों में महाजन का मुँह ताकते हुए कई दिन वहाँ पड़ा रहना पड़ता था, जिसमें भी खर्च होता है। फिर गल्ले के कई आढ़तिए तोल में गड़बड़ी कर किसानों को चोट देते, धर्मादा वगैरह अनेक प्रकार की रकमें उन से वसूल करते। सारांश यह कि व्यक्तिगत रूप से अपनी पैदा-

वार को बेचने में किसान अच्छा-खासा नुक़सान उठाता था।

पर एक बार जब बेचने की समिति एक गाँव में बन गई और उस गाँव के किसानों का अपना सामान बेचने के लिए अलग-अलग मंडियों में जाना बन्द हो गया, तो उससे एक तरफ़ के खर्च से और धर्मादा इत्यादि वसूलयाबियों से उनकी बचत हुई और इससे भी ऊपर अब मंडियों के आढ़तिए गर्ज़मन्द हो गए और स्वयं दौड़-दौड़ कर गाँव की सहकारी समितियों के पास पहुँचने लगे और अच्छा दाम देने लगे कि गल्ला हमारे ही हाथ बेचो।

इन्हीं सब अनुभवों से सहकारी आन्दोलन के लिए हमारे किसानों में प्रेम फैलने लगा और यह समितियाँ गाँववालों में प्रिय होने लगीं। स्वराज्य के बाद तो इस दिशा में प्रगति बहुत ही तेज़ हुई है। अब एक नए प्रकार की बहुधन्धी सहकारी समितियाँ बनने लगी हैं। ऐसी बहुधन्धी समितियाँ, जैसा नाम से स्पष्ट है, एक नहीं अनेक धन्धे करती हैं, यानी रुपयों के लेने-देने का काम भी, किसानों के लिए ज़रूरी बीज, खाद, खेती के औज़ार खरीदने का काम भी और उनकी पैदावार को बेचने का भी काम, इत्यादि।

स्वराज्य के बाद लगभग सब ही राज्यों में पुराने वक्त से चले आनेवाले सहकारी समितियों वाले कानूनों में सुधार किया गया या नए कानून बनाए गए। इन सुधारों या कानूनों का मक़सद यही है कि सहकारी समितियों के संगठन में और सहूलियतें हों और सरकार द्वारा उनका और उचित ढंग से निरीक्षण हो तथा सरकारी सहायता भी उनको और अधिक मिले।

और इधर कुछ वर्षों से सहकारी आन्दोलन एक और नए क्षेत्र की ओर बढ़ने लगा है। यह है सहकारी खेती या जिसे अंग्रेज़ी में 'कोआपरेटिव फार्मिंग' कहा जाता है। हमारे गाँवों की एक कहावत है कि 'साझे की खेती गदहा भी न खाए, गदहा खाए भी तो अकारथ जाए।' पर बदलते ज़माने के साथ पुरानी कहावतें भी बेमतलब हो जाती हैं। सहकारी खेती पर तो आज बड़ा ज़ोर दिया जा रहा है। भारत सरकार के योजना कमीशन ने और स्वयं प्रधान मंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने सहकारी खेती पर बहुत ज़ोर दिया है। अनेक राज्यों में इधर जो भूमि-सुधार कानून बने हैं, उनमें भी सहकारी खेती को बढ़ावा देने के लिए कई धाराएँ रक्खी गई हैं।

सहकारी खेती का मक़सद क्या है? हमारे किसानों के पास छोटी-छोटी ज़मीनें हैं, तिस पर वे दूर-दूर छितरी हुई हैं। किसी के पास हल है तो बैल नहीं। किसी के पास बैल हैं तो हल नहीं, किसी के पास बीज नहीं, किसी के पास सिंचाई के लिए कुआँ नहीं। सहकारी खेती का मक़सद है कि ऐसी छोटी-छोटी अलाभकर ज़मीनोंवाले काश्तकारों की ज़मीन और साधनों को जुटा कर, सब मिल कर काम करें ताकि पैदावार अच्छी हो, और बाद में पैदावार ज़मीन के प्रत्येक किसानों द्वारा सहकारी खेती समिति को दिए गए साधनों के आधार पर बाँट दी जाए। ज़रूर ऐसे साझे में आपस में गलतफ़हमी पैदा हो जाने का और मनमुटाव होने का खतरा रहता है। इसलिए तो उसके लिए खूब सोच-समझ कर कानून बनाए जाते हैं। फिर यह भी किया जाता है कि सहकारी खेती की साझेदारी ज़मीन जोतने तक रक्खी जाती है। एक बार जब इस प्रारम्भिक साझेदारी से किसानों को लाभ हो जाता है तो दूसरी बार वे सहकारी खेती की साझेदारी और आगे तक ले जाने को तैयार हो जाते हैं।

ऐसे सहकारी खेतों के संगठन में शुरू में बहुत होशियारी से बढ़ने की ज़रूरत है। उत्तर प्रदेश व बम्बई राज्यों की सरकारों के प्रयास से कुछ ऐसी सहकारी खेती शुरू भी करवा दी गई है और वह बड़ी सफल सिद्ध हुई। ऐसे खेतों के किसानों की आमदनी कई गुना बढ़ गई। पड़ौसी चीन में भी, जो भारत की तरह ही कृषि-प्रधान देश है, सहकारी खेती को बड़ा बढ़ावा दिया जा रहा है।

यह तो आपको मालूम ही है कि खेती वाली व अन्य सहकारी समितियों के संगठन के लिए बाकायदे नियम होते हैं, उनका सदस्य चन्दा होता है, उनकी प्रबन्ध कमेटियों को चुनने का विधान होता है, उनकी वार्षिक मीटिंगों में हिसाब-किताब व रिपोर्टें पेश करने का नियम होता है। इन समितियों को सरकार सलाह-मशविरे व निरीक्षण तथा रुपयों द्वारा मदद देती है।

कहा गया है कि हम अपने देश भारत में एक कल्याणकारी राज्य, या सहकारी सम्मिलित स्वराज्य स्थापित करना चाहते हैं जिसमें हर व्यक्ति सुख और चैन से अपने-अपने धन्धे लगा हुआ अपना जीवन व्यतीत करे। ऐसा सहकारी सम्मिलित स्वराज्य एक तरफ़ अधिनायकवादी देशों के दमन चक्र से और दूसरी तरफ़ साम्राज्यवादी-पूंजीवादी देशों की लूट-खसोट और भुख-मरी से निराला होगा, अलग होगा। ऐसा सहकारी स्वराज्य अहिंसा और शान्ति पर आधारित होगा। ऐसे राज्य की स्थापना के लिए हमारे गाँववालों को आगे आना होगा। शहरी लोग उसमें ज्यादा काम न आवेंगे। इस लिए ज़रूरी है कि हमारे गाँववाले गाँवों की सहकारी व्यवस्था को भली भाँति समझें और अपने-अपने गाँव में सहकारी समितियों का संगठन करें।

★

कुछ मूल समस्याएँ

के० सन्तानम

जहाँ तक ग्रामीण भारत का सम्बन्ध है, दूसरी पंचवर्षीय योजना में देश भर में सामुदायिक विकास खण्डों और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं का विस्तार करने का निर्णय ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात है। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि यह निर्णय उचित और अत्यधिक महत्व का है। शायद यही एक मात्र तरीका है जिससे राष्ट्रीय पैमाने पर गाँवों का पुनर्निर्माण किया जा सकता है।

लेकिन मेरा विचार है कि जब तक कुछ अन्य मूल समस्याओं का कोई हल नहीं निकाल लिया जाता, तब तक इन विस्तार सेवाओं से कोई लाभ नहीं होगा। जिन बर्तनों में से पानी रिसता हो उनमें पानी इकट्ठा करने की कोशिश करना बेकार है। आजकल जो भी कार्य हम कर रहे हैं, उनमें से अधिकतर इसी प्रकार के हैं।

इस चीज़ का आभास तो हम लोगों को भली भाँति हो गया है कि जनसंख्या की समस्या का हमारे आर्थिक विकास पर बहुत प्रभाव पड़ता है। लेकिन हम में से जो भी, कुछ निर्णय करने की स्थिति में हैं, इस बात को मानने से कतराते हैं कि जब तक आगामी कुछ वर्षों तक हमारी जनसंख्या इतनी ही नहीं रहती या इसमें होनेवाली वृद्धि को कम नहीं किया जाता, हमारे देहातों का आर्थिक विकास 'न' के बराबर होगा। इस समस्या पर विचार करते समय दो बातों का खयाल रखना आवश्यक है। राष्ट्रीय आय में होनेवाली वृद्धि का सारे देश में समान वितरण नहीं होता। शहरी इलाकों को देहाती क्षेत्रों की अपेक्षा इस वृद्धि का अधिक भाग प्राप्त होता है। इसलिए अगर दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक राष्ट्रीय आय में २५ प्रतिशत वृद्धि होगी, तो ग्रामवासियों की औसत आय में साढ़े बारह प्रतिशत वृद्धि होने की सम्भावना कम है। शहरों की बढ़ती हुई जनसंख्या के बावजूद गाँवों की बढ़नेवाली जनसंख्या को इस समय भी गाँवों के कारोबार ही में जुटना पड़ता है। इससे तो यही साबित होता है कि गाँववालों की औसत आय में वृद्धि होने की सम्भावना कम ही है।

माना कि यह एक कठिन सामाजिक और मनोवैज्ञानिक समस्या है, लेकिन हमें गाँववालों को यह बात समझानी है कि अपने परिवारों को सीमित रख कर दूसरी पंचवर्षीय योजना में वे बहुत बड़ा योग देंगे। अगर किसी विशिष्ट नारे (जैसे 'तीन से अधिक बच्चे मत पैदा करो')को लेकर प्रचार किया जाए तो अधिक सफलता मिलने की सम्भावना है। संयम एक पुरातन भारतीय गुण है और हमें इसको अधिकाधिक अपनाने का हर सम्भव प्रयास करना चाहिए। लेकिन साथ ही यह बात भी नहीं भूलनी चाहिए कि सामान्य संयम से परिवार नियन्त्रण अवश्य हो जाएगा, यह ज़रूरी नहीं है। इसके अतिरिक्त अन्य निर्दोष उपायों (जैसे शल्य चिकित्सा) का भी उन लोगों पर प्रयोग करना चाहिए जो इसके लिए तैयार हों।

सामुदायिक विकास के लिए दूसरी आवश्यक चीज़ है कृषि। ज़मींदारी का उन्मूलन करके काश्तकारी-अधिकारों में सुधार करना बहुत आवश्यक है। साथ ही यह भी नहीं भूलना चाहिए कि भूमि-सम्बन्धी देश-व्यापी सुधारों से कृषि में लगनेवाली निजी पूंजी कम हो जाएगी। काश्तकार जो अब स्वयं भूमिपति बन रहा है, अधिक शारीरिक परिश्रम तो अवश्य करेगा किन्तु जहाँ तक खाद, मशीनों के प्रयोग और वैज्ञानिक कृषि का सम्बन्ध है, उनके प्रयोग में तात्कालिक ह्रास हो जाएगा। परन्तु यह सब तो अवश्यम्भावी है और इसका सामना हमें करना ही होगा। दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए यह सुविधाजनक भी होगा कि इस वर्ष के अन्त तक भूमि-सुधार करके भूमि-व्यवस्था स्थायी कर दी जाए।

वैज्ञानिक ढंग से खेती करने के लिए बड़े-बड़े ज़मींदारों का स्थान तो सहकारी समितियाँ ले सकती हैं, लेकिन दरिद्र किसानों में ऐसी समितियाँ बनाने का काम कठिन है और धीरे-धीरे ही किया जा सकता है। सरकारी अफ़सरों के प्रोत्साहन पर चलने-वाली कागज़ी समितियों से तो अन्ततः सहकारिता आन्दोलन को हानि ही पहुँचेगी। इसलिए बड़े ज़मींदारों के स्थान की पूर्ति सहकारी संस्थाएँ बना कर की जा सकती है। गाँवों में पैसा बहाना तो सरल है परन्तु अगर यह कार्य होशियारी से न किया गया तो कर्जे की वसूली पर होनेवाली कठिनाई और अप्रियता के फल-स्वरूप सरकारी ऋण के सभी लाभ खत्म हो जाएँगे।

सामुदायिक विकास-योजनाओं से पूरा लाभ उठाने के लिए तीसरी मूल आवश्यकता है शिक्षा का द्रुत गति से प्रसार। यह दुख की बात है कि प्रारम्भिक शिक्षा के अनिवार्य करने के प्रश्न को लेकर भी अभी तक हम एकमत नहीं हुए हैं। मेरा विश्वास है कि बुनियादी स्कूल, जिसमें दस्तकारी पर ज़ोर दिया जाता है, उस सामान्य प्राइमरी स्कूल से अच्छा है जिसमें केवल पढ़ाई-लिखाई पर ज़ोर दिया जाता है। इसका अर्थ यह नहीं कि मैं पढ़ाई-लिखाई को बेकार या हानिकारक मानता हूँ। गाँवों के अधिकतर बच्चों को वातावरण से मजबूर होकर कई प्रकार का शारीरिक श्रम करना पड़ता है, उन्हें अपना पैतृक धन्धा भी सीखना पड़ता है। इनके लिए

[शेष पृष्ठ १४ पर]

भाखड़ा बाँध पर आंध्र के किसान

आन्ध्र के किसानों की 'तीर्थ-यात्रा'

अक्तूबर के मध्य की बात है। एक दिन सवेरे ही आन्ध्र के ३५० किसान भाखड़ा बाँध को देखने आए। इनमें सभी अवस्था के व्यक्ति थे – बूढ़े, जवान, बच्चे। आन्ध्र राज्य के अनाकापल्ली स्थान से ये सब लोग सिंचाई और बिजली की इस महान् योजना को देखने आए थे जिसे प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने 'तीर्थस्थान' की संज्ञा दी है।

भाखड़ा के इंजीनियरों ने उन्हें वह स्थान दिखाया। इस महान् योजना के निर्माण कार्य को उन्हें पहाड़ी के विभिन्न स्थलों से देखने का अवसर मिला। वे पहाड़ी पर चढ़े और वहाँ से उन्होंने सैंकड़ों फुट नीचे बाँध को देखा और उस क्षेत्र पर दृष्टि डाली, जो बाँध के पूरा होते ही एक विशालकाय झील का रूप धारण कर लेगा।

उन्हें यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि इस स्थान पर आठ हज़ार आदमियों के काम करने पर भी कहीं गन्दगी का नाम तक न था, मक्खी तो कहीं दिखाई भी न देती थी। पीने का स्वच्छ पानी धातु की एक टंकी में जमा था और शौचालय आदि भी अत्यन्त साफ़ थे।

सन्ध्या समय आन्ध्र के किसान नंगल के लोगों से मिले। यहाँ जगमगाते नंगल बाँध पर लोग मन बहलाने आते हैं। यहाँ उन्होंने पनबिजली पैदा करनेवाली उस नहर के दर्शन किए, जिससे लाखों एकड़ भूमि की सिंचाई होगी। तुरन्त उनकी आँखों में आन्ध्र राज्य की नागार्जुन सागर योजना का नक्शा घूम गया जिससे उनके राज्य का एक बड़ा भूभाग लहलहा उठेगा।

भाखड़ा-नंगल योजना के अतिरिक्त इन किसानों ने समूचे भारत की प्रमुख सिंचाई और बिजली योजनाओं, राष्ट्रीय उद्योगों, ग़वेषणा संस्थाओं और देश के एतिहासिक नगरों और धार्मिक स्थानों की भी यात्रा की। इस यात्रा में उन्हें पचास दिन लगे और उन्होंने लगभग ५ हज़ार मील तय किए।

हैदराबाद में उन्होंने उस्मानिया विश्वविद्यालय, गोलकुंडा किला और सालारजंग अजायबघर आदि को देखा। बम्बई में उन्होंने ने ७० हज़ार एकड़ में फैली आरे दुग्धशाला को देखा। बम्बई के लाखों लोगों को रोज़ ७० हज़ार पौंड दूध यहीं से प्राप्त होता है। किसानों ने नमूने के तौर पर इस दूध का स्वाद लिया और इस बात पर ध्यान दिया कि वहाँ पशुओं को कैसे पाला जाता है। इसके अलावा बर्मा शैल तेल-शोधक कारख़ाने में भी वे गए। वहाँ उन्होंने मिट्टी के तेल और पेट्रोल के शुद्ध होने की विधियों को देखा। आगरे में ताजमहल इतना पसन्द आया कि उन्होंने अपने दो दिनों के आवास में उसे कई बार देखा।

इस यात्रा के दौरान में वे दिल्ली भी गए जहाँ उन्होंने राजघाट पर गान्धी जी की समाधि के दर्शन किए और प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू के घर पर उनसे भेंट की।

उन्होंने लखनऊ में गन्ना गवेषणा केन्द्र का निरीक्षण किया। अयोध्या में वहाँ के स्थानीय किसानों से वे मिले और उनके लोकगीतों और लोक-नृत्यों की सराहना की।

इसी प्रकार बनारस विश्वविद्यालय, सिन्दरी रासायनिक खाद कारख़ाना, चितरंजन रेल-इंजन का कारख़ाना, दामोदर घाटी योजना, हीराकुड योजना, टाटानगर, पुरी आदि विभिन्न दर्शनीय स्थल देखते हुए वे १० नवम्बर को अपने गाँव लौटे। वहाँ हज़ारों ग्रामवासियों ने उनका स्वागत किया और जुलूस निकाला।

इस यात्रा ने उनके दृष्टिकोण को व्यापक बनाया। उन्होंने नई-नई चीज़ें देखीं, नई बातें सीखीं। अपने देश का भ्रमण कर उन्हें भारत का नया रूप पास से देखने को मिला। इसके साथ ही बहुत सी खेती सम्बन्धी बातें उन्होंने अपने उन भाइयों को बताईं जिनके वे मेहमान रहे थे।

इस पूरी यात्रा का आयोजन अनाकापल्ली कृषि संस्था ने किया था। रेलवे से एक विशेष गाड़ी की व्यवस्था की गई थी। ५० दिन का खाने-पीने का प्रबन्ध किया गया था। सब किसानों ने मिलकर देश के विभिन्न स्थानों और संस्थाओं को देखने का कार्यक्रम तैयार किया था।

★

कुछ मूल समस्याएँ—[पृष्ठ १२ का शेषांश]

पढ़ाई-लिखाई शहरी बच्चों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि शहरी बच्चे तो रहते भी ऐसे ही वातावरण में हैं। अगर आर्थिक कठिनाई के कारण या उपयुक्त भवनों और दस्तकारी सिखाने के लिए प्रशिक्षित अध्यापकों के अभाव में प्रारम्भिक बुनियादी शिक्षा सारे भारत में अनिवार्य नहीं की जा सकती तो भी ऐसे प्रारम्भिक स्कूल खोलकर जो बुनियादी नहीं हैं, प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य कर दी जाए और समय बीतने पर इन प्राइमरी स्कूलों को बुनियादी स्कूलों में परिवर्तित कर दिया जाए। इश्तहारों, पुस्तिकाओं और फिल्मों की सहायता से किए जाने वाले प्रचार का अपढ़ लोगों पर अधिक असर नहीं पड़ता। प्रौढ़ साक्षरता आन्दोलन ज़ोर-शोर से शुरू किया जाए और दूसरी पंचवर्षीय योजना में प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य कर दी जाए।

एक और भी समस्या है जिस पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया। कई गाँवों में स्वास्थ्य सम्बन्धी तथा सामाजिक सुधार तब तक सम्भव नहीं जब तक सारा गाँव का गाँव किसी अन्य स्थान पर आयोजित ढंग से नहीं बसाया जाता। गाँवों में मकानों का निर्माण बग़ैर सोचे-समझे होता रहा है। मकानों में फल-फूल लगाने के लिए स्थान नहीं रखा जाता, मवेशियों के लिए और कूड़ा फेंकने के लिए भी कोई उपयुक्त जगह नहीं होती। गलियाँ इतनी तंग होती हैं कि उनमें से एक गाड़ी का निकलना भी मुश्किल होता है। यह आवश्यक है कि हर विकास खण्ड में आरम्भ में सावधानी से गाँवों का पर्यवेक्षण किया जाए। इसके पश्चात् यह निर्णय किया जाए कि किन गाँवों को उनके वर्तमान स्थान से हटाए बिना आवश्यक सुविधाएँ प्राप्त हो सकती हैं और किन को अपने स्थान से हटाकर किसी नए स्थान पर फिर से बसाना आवश्यक है। पिछली प्रकार के गाँवों को नए स्थान पर ले जाने में जो खर्चा आएगा, उसको वहन करने में किसी प्रकार की झिझक नहीं होनी चाहिए।

इन चार मूल समस्याओं को हल करने के बाद ही सामुदायिक विकास-योजनाओं के विस्तार पर व्यय होनेवाली पूंजी से उचित परिणाम प्राप्त हो सकते हैं।

★

नीलोखेड़ी में महिला विकास-कार्यकर्त्ता द्वारा एक पुराने कुएँ की मरम्मत

एक प्रशिक्षण-केन्द्र में ग्राम सेवक बाग़बानी सीख रहे हैं। **नीचे :** मानक माजरा गाँव में विकास-कार्यकर्त्ताओं द्वारा शारीरिक श्रम

कार्यकर्त्ताओं का प्रशिक्षण

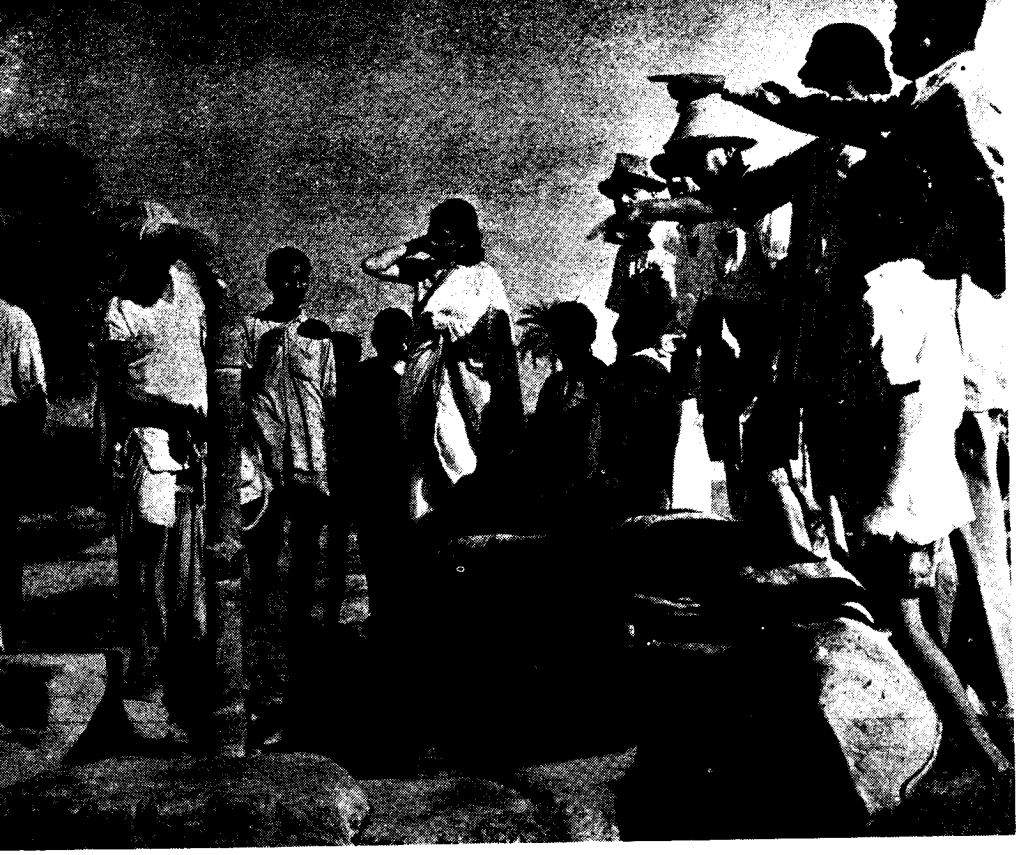

विकास-योजना अधिकारियों द्वारा एक गाँव में एक कुएँ का निरीक्षण

प्रत्येक ग्राम सेविका के लि
शारीरिक श्रम

एक गाँव में विकास-योजना

बख्शी का तालाब (लखनऊ) प्रशिक्षण केन्द्र में बागवानी की एक कक्षा

ादण-काल में
ीं है

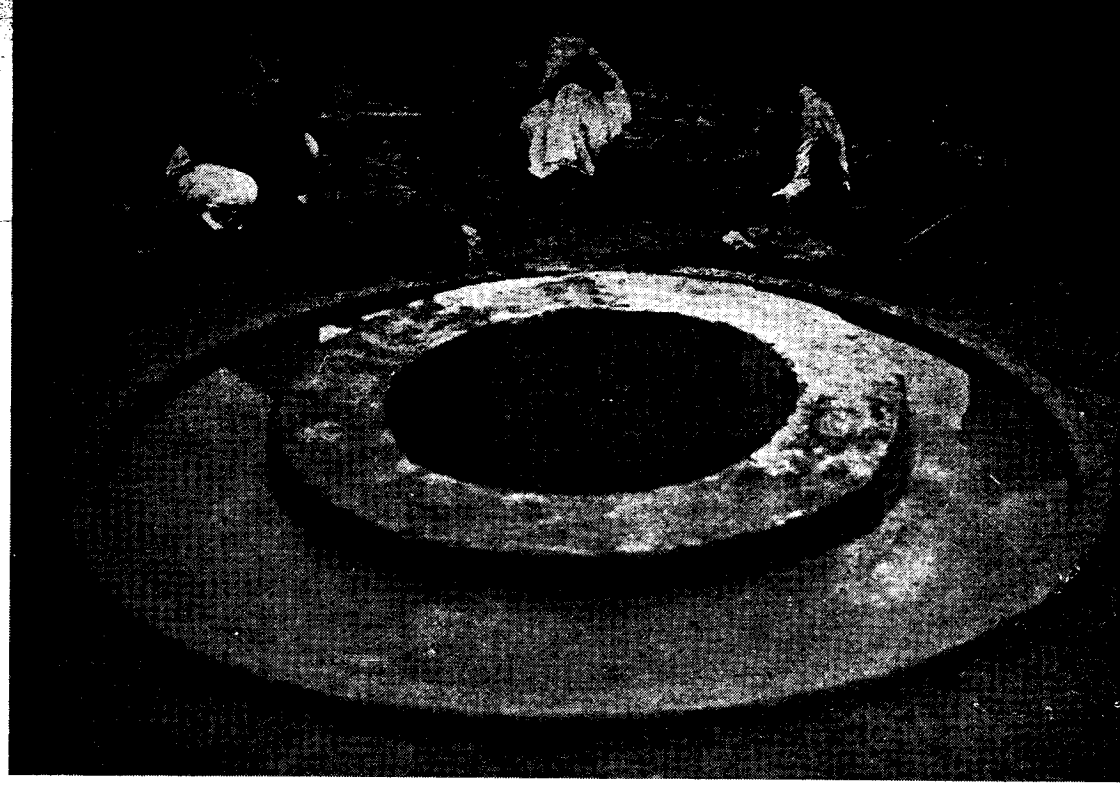

नीलोखेड़ी में विकास-योजना अधिकारी एक कुएँ को पक्का बना रे हैं

भूमि साफ़ कर रहे हैं

रायपुर गाँव में विकास-योजना अधिकारी एक खुली नाली ठीक कर रहे हैं

हिमाचल सागर, हैदराबाद के प्रशिक्षण केन्द्र में महिलाएं खेतों में पानी दे रही हैं

कुलिया के विस्तार प्रशिक्षण केन्द्र में महिलाएं सीमेंट के चौके ढालना सीख रही हैं

हमारा भविष्य

ग्रेस लेंगले

ऐसे बहुत से आँकड़े उपलब्ध हैं जिनसे भारत में सामुदायिक विकास-योजनाओं की सफलता का पता चलता है। सफलता को नाटकीय ढंग से प्रस्तुत करने के कारण कहीं-कहीं इन आँकड़ों में पुनरावृत्ति भी नज़र आ सकती है।

जब हम किसी विकास-योजना में एक निर्दिष्ट लक्ष्य की १६ प्रतिशत और दूसरे लक्ष्य (नए स्कूलों के खुलने) की ४०० प्रतिशत सफलता देखते हैं, तो हमें उन नए स्कूलों को देखकर सचमुच बड़ा गर्व होता है। साथ ही उस १६ प्रतिशत सफलता को देख कर यह भी अनुभव होता है कि इन लक्ष्यों में जनता के दृष्टिकोण से कहीं कुछ त्रुटि अवश्य रह गई है। इसका अर्थ उद्देश्य की असफलता नहीं, बल्कि योजना को ग़लत तरीके से बनाना है।

इन विकास-योजनाओं में जनता के सहयोग को देखकर हम आश्चर्यचकित् रह जाते हैं। हम देखते हैं कि मोहम्मद बाज़ार में सरकार ने २३,००० रुपए खर्च किए तो उससे अनुप्राणित होकर गाँववालों ने लगभग ४½ लाख रुपये का योगदान दिया। परन्तु जनता के यथार्थ सहयोग को समझने के लिए इन आँकड़ों से कुछ अधिक देखना भी आवश्यक है। निरीक्षक कार्यक्रम को इस प्रकार बताते हैं—

जब यह विकास-योजना शुरू की गई थी और पहली बार विकास विभाग की जीप गाँव में पहुँची थी तो सारे गाँववाले डर से छिप गए थे। लेकिन अब गाड़ी को देखते ही सब लोग उसे घेर लेते हैं।

पहले अधिकारियों के कहने पर गाँववाले एकत्रित तो हो जाते थे, किन्तु वहाँ बैठकर वे किसी काम में रुचि नहीं दिखाते थे। परन्तु अब वे अपनी कठिनाइयों के बारे में पूछते हैं, वाद-विवाद में हिस्सा लेते हैं और बैठक खत्म होने के बाद आपस में भी उन विषयों पर बातचीत करते हैं।

आरम्भ में गाँववालों को सिंचाई के तरीके, अच्छे बीज, खेती के औज़ार आदि देकर उनका प्रयोग बताया जाता था। परन्तु अब वे लोग स्वयं इन तरीकों को सीखकर ज़रूरी चीज़ें खरीदने की कोशिश करते हैं।

कुछ कार्यकर्त्ताओं ने एक पुराने मकान की मरम्मत करके और उस पर सफ़ेदी करके उसे एक विधवा के रहने के लिए ठीक कर दिया। अब गाँव एकदम साफ़ है और घर भी सफ़ेदी से पुते हुए साफ़-सुथरे हैं।

आज सरकारी सहायता के प्रति गाँववाले पहले की अपेक्षा कहीं अधिक सजग हैं। वे जानते हैं कि मलेरिया का इलाज सिखानेवाले लोगों का दल किन दिनों में उनके गाँवों में आता है। इसलिए जब कभी उन्हें देर हो जाती है तो वे शिकायत करते हुए उसका कारण पूछते हैं।

अपने बच्चों की शिक्षा के लिए गाँववाले बहुत सचेष्ट हैं। वे इसके लिए रुपया इकट्ठा करने, इमारत बनाने और सब कुछ करने के लिए तैयार हैं। उनके पुरातन-पन्थी विचार और आलस्य भाग गए हैं। अपनी शक्ति और कामों पर उन्हें गर्व है। इसीलिए अपने बनाए हुए कुंओं, स्कूलों और स्कूलों में पढ़ते हुए छात्रों को वे बड़े गर्व और चाव से दिखाते हैं।

पहले जब गाँव के पशु बीमार हो जाया करते थे तो गाँव का भंगी या कोई अछूत वर्ग का आदमी उसका उपचार किया करता था। परन्तु अब ऐसे अवसर पर गाँववाले तुरन्त पशु-चिकित्सक के पास जाकर उसकी सलाह लेते हैं और इलाज करवाते हैं।

एक समय था जब रोग और कीटाणुओं को गाँववाले दैवी प्रकोप समझते थे, परन्तु अब वे समझने लगे हैं कि मनुष्य इनको जीत सकता है।

कूड़े और खाद के लिए गड्ढे खोदना आरम्भ में एक समस्या थी। विचार यह था कि पुरुषों को उसकी उपयोगिता का विश्वास दिलाने से ही यह काम सरल हो जाएगा, परन्तु वास्तव में उन गड्ढों का उपयोग तभी हो सका जब गाँव की स्त्रियों को उनकी उपयोगिता समझाई गई।

गाँव की प्राचीन परम्पराएँ स्त्रियों के ही कारण स्थिर रहा करती हैं। परन्तु यदि उनको एक बार विश्वास हो जाए कि अमुक बात अच्छी है तो वे बड़ी तेज़ी से उसे ग्रहण कर इस बात की चेष्टा करती हैं कि उनके पति और पुत्र भी उन्हें अपनाएँ। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि पहले गाँव की स्त्रियों का विश्वास प्राप्त किया जाए।

गाँववालों का अधिकांश रुपया आभूषण बनवाने में व्यय हुआ करता था। परन्तु अब गाँववाले इस अपव्यय की अपेक्षा दैनिक आवश्यकता की वस्तुएँ जैसे मिट्टी के तेल की लालटैन, छतरी और घर की दूसरी वस्तुएँ खरीदने की आवश्यकता अनुभव करने लगे हैं।

गाँववाले अब संकुचित दायरे से निकलकर दूसरे व्यक्तियों से मिलने की ओर उन्मुख हो रहे हैं। यद्यपि यातायात के साधन अभी बहुत उन्नत नहीं हुए हैं, परन्तु ज्ञान-वर्धन और सामाजिक

उन्नति के लिए घर से बाहर निकलने की उपयोगिता को अब वे समझने लगे हैं।

विकास का अर्थ यह नहीं है कि अमुक गाँव में कितनी नई पाठशालाएँ या कितनी नई सड़कें बनी हैं, बल्कि यह होता है कि गाँव में जागृति कितनी हुई है? गाँववालों के विचारों में कितना परिवर्तन आया है? सब गाँववाले यह समझने लगे हैं कि यह देश अपना है। वे एक स्वतन्त्र देश के नागरिक हैं। यही असली उन्नति है, असली परिवर्तन है।

अप्रैल १९५५ में प्रकाशित की गई मूल्यांकन रिपोर्ट में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के लक्ष्यों को बड़ी कुशलता से दिखाया गया था।

यह एक निर्विवाद सत्य है कि आत्मनिर्भरता का पाठ सिखाने और उन्नति के लिए सम्मिलित प्रयास करने की भावना से गाँव के स्त्री, पुरुष, बाल-बच्चे सभी को नव शक्ति मिलेगी, नई आशाएँ जागेंगी। निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर सामुदायिक विकास-योजनाओं द्वारा प्राप्त की गई सफलता के मूल्यांकन में सहायक होगा—

(१) क्या गाँववालों में ज्ञान-वर्धन और उन्नति करने की प्रवृत्ति जागृत हुई है?

(२) क्या वे पहले की अपेक्षा अधिक आत्मनिर्भर, और अपनी समस्याएँ स्वयं सुलझाने के योग्य हो गए हैं? क्या वे अपनी शक्तियों को आधुनिक युग की परिस्थितियों के अनुसार देखते हैं?

(३) क्या आज का ग्रामवासी, गाँव की जनतंत्री संस्थाओं के साथ सहयोग देकर काम करना सीख गया है?

(४) क्या साधारण ग्रामवासी का जीवन-स्तर कुछ ऊँचा हुआ है? उसकी सामाजिक, आर्थिक और नैतिक अवस्था कुछ सुधरी है?

यह ठीक है कि इन प्रश्नों के उत्तर 'हाँ' या 'न' में नहीं दिए जा सकते। यह कठिनाइयाँ धीरे-धीरे ही दूर होंगी, यह सोच कर कि इनके लिए लम्बे समय की आवश्यकता है, जानबूझ कर शिथिल होना भी ठीक नहीं।

यदि वास्तव में इन उद्देश्यों की प्राप्ति करनी है तो इसके लिए योजनाएँ बनानी होंगी, इन्हें कार्यरूप में परिणत करना होगा और इन्हीं को प्रमुखता प्रदान कर सचेष्ट रहना पड़ेगा।

गाँव की उन्नति के लिए एक और बात भी अत्यन्त आवश्यक है कि गाँववालों में उन्नति करने की रुचि किस सीमा तक है। क्या वे एक बार श्रमदान करके अपने कर्त्तव्य की इति समझ लेते हैं और फिर आवश्यकता पड़ने पर 'अब दूसरों की बारी है' कहकर काम से बचना चाहते हैं?

बहस के लिए जब बैठकें होती हैं तो उनका विषय यही रहता है कि गाँववालों के साथ मिलकर किस प्रकार की योजनाएँ बनाई जाएँ जिससे वे लोग अपने ज्ञान, बुद्धि, नेतृत्व और साधनों के द्वारा अपनी समस्याएँ स्वयं हल कर सकें। यह देख कर अत्यन्त खेद होता है कि कभी-कभी दफ्तरी कार्रवाइयों के कारण विकास अधिकारियों को योजनाएँ बनाने में पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं मिल पाती।

यह सच है कि यदि बिना सोचे-समझे स्कूल या सड़क बनाने का काम शुरू किया जाए, तो सामुदायिक विकास और गाँववालों का अपकार ही होता है। जब ज़मींदार किसी सार्वजनिक कार्य के लिए रुपया दान देते हैं और निम्न वर्ग के लोग परिश्रम करते हैं तब कार्य तो पूरा हो जाता है, परन्तु पारस्परिक सहयोग की भावना लुप्त हो जाती है। इसका अर्थ यह नहीं होता कि वास्तविक लक्ष्य की किसी भी प्रकार अवहेलना हुई है, बल्कि यह होता है कि जो प्रयास हुए हैं वे सही तरीके पर नहीं हुए।

ग्राम संगठनों की सदस्यता के बारे में जाँच करने पर पता चला है कि ये संगठन चाहे सहकारी समितियाँ हों, विकास मंडल हों, ग्राम पंचायत हो अथवा न्याय पंचायत हो, इसके सदस्य अधिकतर बड़े-बड़े खेतिहर किसान हैं, छोटे किसान और बिना ज़मीनवाले मज़दूर इनमें कोई उत्साह नहीं दिखाते।

विकास विभाग के सदस्यों ने अभी कुछ दिन हुए एक प्रारम्भिक योजना-क्षेत्र का दौरा किया जिसमें पिछले तीन वर्ष से काम हो रहा था। कुछ गाँवों में कृषि के बहुत थोड़े तरीकों में परिवर्तन हुआ था। केवल प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र ही वहाँ उनकी सफलता का प्रतीक था। इसका उत्तर यह दिया गया कि गाँव की निर्धनता के कारण आर्थिक उन्नति सम्भव नहीं हो सकी।

दल ने ४० मील दूर बसे एक धनी गाँव का दौरा किया। परन्तु वहाँ भी प्रशिक्षणार्थियों द्वारा खोदे गए पानी सोखने के कुछ गड्ढे और फटकने का नया तरीका ही बस उनके परिश्रम के चिन्ह थे।

एक प्रशिक्षण संस्था के विचारवान अध्यक्ष ने उस गाँव में अपने ढाई वर्ष के अनुभव बताए। उनका कहना था कि यह गाँव धनी है इसलिए वहाँ आर्थिक दशा सुधारने का कोई प्रश्न नहीं था। गाँव में सबके पास ज़मीन है और किसान खुशहाल हैं। जब मैंने उनसे गाँव में नालियाँ बनाने की बात की तो वे उसकी कोई चिन्ता न कर शहर में जुआ खेलने चले गए। मुझे तब अनुभव हुआ कि मैं जिनको देहाती समझ रहा था वे वास्तव में देहाती नहीं हैं।

उन अध्यक्ष महोदय ने बताया कि प्रयोग के उद्देश्य से हमने

[शेष पृष्ठ २६ पर]

कुरनूल के कलक्टर द्वारा विकास-कार्य का उद्घाटन

कुरनूल में विकास-कार्यक्रम

कुरनूल के एक गाँव में स्त्रियों द्वारा श्रमदान

लौकी की बेल

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

शिवपुरी के शिव मन्दिर के उत्तर में कूड़े और राख के ढेर पर एक लौकी की बेल फूट निकली। समय के साथ ही यह बेल बढ़ती गई और हरयाली में वृद्धि होती गई।

मन्दिर के बाग़ में ही नारियल का एक ऊँचा पेड़ था।

एक दिन नारियल के पेड़ और लौकी की बेल में बात-चीत आरम्भ हुई। पेड़ों और बेलों में बात-चीत तो होती ही है, हाँ, हम सुन नहीं पाते और सुन भी लें तो समझ नहीं सकते।

बातचीत के साथ ही उत्तेजना भी बढ़ती गई और अन्त में दोनों में झड़प हो गई।

नारियल के पेड़ ने आवेश में आकर कहा—"कूड़े के ढेर में रहनेवाली दुष्ट नीच बेल! ज़बान मत खोल। तेरे बच्चे सफ़ेद राख मल कर भक्त होने का दम भरते हैं, पर तुझ से और तेरे पाखंड से मैं अच्छी तरह परिचित हूँ।"

"चुप रह। लम्बा है तो क्या, अपने आप को बड़ा क्यों समझने लगा," बेल ने एक दम उत्तर दिया।

"चुप रहो!" नारियल का पेड़ चिल्ला उठा।

और मन ही मन रोष लिए दोनों चुप हो गए।

× × ×

बेल ने शिव की आराधना आरम्भ की और विनती करती हुई बोली—"भगवन्!"

"बेटी, तुझे क्या चाहिए?" शिव ने बेल से पूछा।

"मेरे भगवन्, मुझ से इस ऊँचे पेड़ की उद्दण्डता सहन नहीं होती। यह मेरे बच्चों और उनकी भक्ति का मज़ाक उड़ाता है। मैं आप के गुम्बज के शिखर पर जाना चाहती हूँ, मैं वहीं रहूँगी। केवल इस प्रकार मैं इस नीच पेड़ को नीचा दिखा सकूँगी। मुझे शिखर पर जाकर बसने की अनुमति दीजिए, मुझे और कुछ नहीं चाहिए," लता ने प्रार्थना की।

"ऐसा ही होगा," शिव जी बोले।

× × ×

बेल को गुम्बज के शिखर पर चढ़ते देख भगवान् कृष्ण ने पूछा—"तुम क्या कर रही हो? आवेश में तुम यह नहीं समझ रहीं कि तुम एक बड़ा ख़तरा मोल ले रही हो।"

दम्भी बेल बोली—"अपना उपदेश तुम अर्जुन को देना, मुझे माफ़ करो। मुझे भगवान् महादेव ने वरदान दिया है और मैं इससे पूरा लाभ उठाऊँगी। यह ऊँचा पेड़ अपनी लम्बी-लम्बी डालें हिला-हिला कर मेरा मज़ाक उड़ाता है, मेरे लिए यह असह्य है।"

कृष्ण महादेव की तरफ़ देखते हुए बोले — "भइया, यह तुमने क्या किया ?" महादेव मुस्कराते हुए बोले — "गोविन्द, तुम चिन्ता न करो। उन लोगों को उपदेश देने से क्या फ़ायदा जो किसी की बात सुनने को तैयार न हों। उसे खुद ही सबक़ सीखने दो।"

× × ×

बेल गुम्बज के शिखर पर चढ़ती गई। ज्यों-ज्यों वह ऊपर चढ़ती गई, उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। गुम्बज पर बची प्रतिमाओं को वह ध्यान से देखती गई। और जब वह शिखर पर पहुँच गई तो गर्व से नारियल के पेड़ की ओर देखते हुए चिल्ला उठी — "मैं इधर हूँ, अब कूड़े में नहीं सबसे ऊपर ! कहाँ है तुम्हारा गर्व ?"

पेड़ निरुत्तर हो गया। करता भी क्या, उसके पास अब कोई उत्तर भी नहीं था।

× × ×

शिखर पर एक बड़ी लौकी पक रही थी। शिखर पर पहुँचने की खुशी में पागल इस लौकी का डीलडौल भी असाधारण था।

सब कुछ ठीक चलता रहा और आखिर वह दिन भी आ गया जब लौकी इतनी भारी हो गई कि बेल से लटकी न रह सकी। और एक दिन लौकी बेल से टूट कर शिखर से नीचे आ गिरी। इतनी ऊँचाई से गिरते हुए बीच में लौकी कई प्रतिमाओं से टकराई, कई देवताओं को भी चोट लगी। और अन्त में लौकी भूमि पर आ गिरी। इसके दर्जनों टुकड़े हो गए और वह खून से लथपथ हो गई। उसकी दशा दयनीय थी।

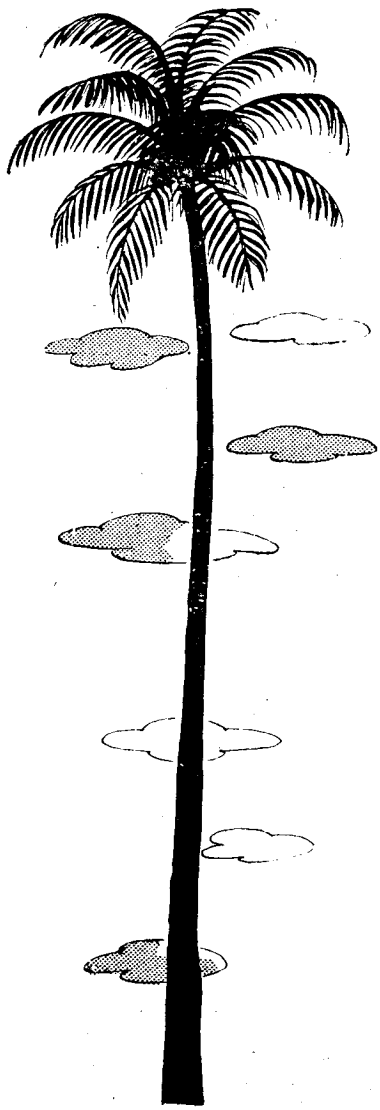

× × ×

अपनी सन्तान की पीड़ा देख कर बेल दुख से विह्वल हो उठी। वह भी सूखती गई और एक दिन फिर से अपनी पुरानी जगह, राख के ढेर पर, आ गई। अब वह अधिकतर ध्यान-मग्न ही रहती।

ज़ोर की आवाज़ के साथ ही एक नारियल पेड़ से नीचे गिरा।

बेल को मानो पुनर्जीवन मिला। वह बोली — "अच्छा हुआ, तुम्हें भी अपनी करनी का फल मिल ही गया। जब मेरा बच्चा गिरा और टुकड़े-टुकड़े हो गया तो तुम कितने प्रसन्न नज़र आते थे। अब कैसी तबीयत है तुम्हारी ?"

भूमि पर पड़े हुए नारियल ने मुस्कराते हुए कहा — "मैं बिलकुल ठीक हूँ, मुझे बिलकुल चोट नहीं लगी। ऐसी चोटों का तो मुझ पर असर तक नहीं होता।"

"ओह ! मैंने कितना पागलपन किया," बेल बोली। अब वह पहले से कहीं अधिक बुद्धिमान हो गई थी। बड़ी संख्या में नई लौकियाँ फिर लगीं और जब वे पक गईं तो एक आदमी आया, उसने उन सबको तोड़ कर एक बैलगाड़ी में भरा और बेचने के लिए पास की मंडी की ओर चला गया।

★

सफ़ाई, सेवा के अभाव में

सावित्रीदेवी वर्मा

पण्डित गंगाधर दिल्ली के एक बड़े अस्पताल में पच्चीस वर्ष कम्पाऊंडर रह चुके हैं। अच्छे-अच्छे डाक्टरों के हाथ के नीचे इन्होंने काम किया है। अपने अनुभव से बहुत कुछ सीख गए हैं। अब पेंशन लेकर दिल्ली के पास ही महरौली में इन्होंने एक छोटी-सी डिस्पेन्सरी खोल ली है। इससे गाँववालों को बड़ा लाभ हुआ। पण्डित जी ने भी सोचा कि सारी उम्र कमाई की है, अब इस बुढ़ापे में गाँव की जनता की सेवा करके कुछ पुण्य भी कमा लें। लगे हाथों परलोक भी सुधर जाएगा।

वह बड़े प्रेम से सब की सेवा करते हैं। उनका कहना है कि प्रकृति एक दयालु माँ की तरह है। यदि लोगों को अपने शरीर की रचना के बारे में थोड़ा-बहुत ज्ञान हो तो वे जान सकते हैं कि शरीर की मशीन किस प्रकार काम करती है? कौन से काम शरीर की क्रिया में रुकावट डालते हैं? कैसा भोजन हज़म नहीं होता? शरीर की सुरक्षा के लिए हमें कैसा भोजन करना चाहिए? हमारा शरीर बीमारी का शिकार क्यों हो जाता है? बीमारी से बचाव कैसे किया जाए? इन सब बातों की जानकारी होनी ज़रूरी है।

प्रायः हर स्त्री को अपने परिवार के लोगों की सेवा का मौका मिलता है। बीमार की सेवा का काम आमतौर पर घर की स्त्रियों को ही करना पड़ता है। भगवान ने स्त्री को सेवा के लायक बनाया है। उसके दिल में ममता है, दया है, उसकी आवाज़ मीठी है, वह धीरज के साथ मुसीबत का सामना कर सकती है। वह कोमल और दयालु है। इसलिए वह बीमार की सेवा का काम अर्थात् नर्सिंग करने के सब तरह योग्य है। पर बहुत कम स्त्रियाँ अपनी इस खूबी को समझ पाती हैं। आम तौर पर स्त्रियों को इस बात की जानकारी ही नहीं होती कि बीमारी क्यों फैलती है, उससे बचाव कैसे किया जाए और यदि घर में कोई बीमार पड़े तो उसकी सेवा किस प्रकार करनी चाहिए? यदि कोई दुर्घटना हो जाए तो क्या सावधानी (प्राथमिक उपचार) बरतनी ज़रूरी है?

पण्डित गंगाधर जी की आम शिकायत यह है कि बीमारी से इतने लोग नहीं मरते जितने कि सेवा के अभाव में मरते हैं। यदि बीमार को उचित पथ्य और समय पर दवाई नहीं मिलती, खाने-पीने, उठने-बैठने में बेपरवाही की जाती है, तो मामूली-सी बीमारी भी भयंकर रूप धारण कर सकती है। बिगड़ा हुआ जुकाम निमोनिये या दमे का कारण बन सकता है। सावधानी न बरतने से हैज़ा, तपेदिक, कुत्ता खाँसी, प्लेग, पेचिश आदि छूत के रोग सारे गाँव में फैल जाते हैं। पिछले साल महरौली के आस-पास के गाँवों में मोतीझरा बुखार से बहुत लोग मरे। पण्डित गंगाधर अकेली जान किधर-किधर जाते। उन्होंने अनुभव किया कि दवाई की इतनी ज़रूरत नहीं थी जितनी की लोगों के यह सिखाने की कि बीमार की सेवा कैसे की जाए। सेवा और ठीक पथ्य (बीमार का भोजन) न मिलने के कारण कई बच्चे मर गए। कई मरीज़ एक बार अच्छे होकर फिर दोबारा बीमार पड़ गए।

इसके अलावा हर साल कितने ही बच्चे पेचिश, कुत्ता खाँसी, बड़ी माता, खसरा आदि रोगों के शिकार होते हैं। गर्मियों में बच्चों की आँखें दुखनी आती हैं तो माताओं की बेपरवाही और गन्दगी से कई बच्चों की आँखें जाती रहती हैं। यदि किसी घर में माता या तपेदिक का मरीज़ होता है तो घर के तीन-चार लोगों को वह रोग ज़रूर हो जाता है। हैज़ा फैलने पर गाँव के गाँव साफ़ हो जाते हैं, क्योंकि रोगी को अलग नहीं रखा जाता। उसका मलमूत्र और वमन खुला छोड़ दिया जाता है। मक्खियाँ उस पर बैठती हैं और पानी और खाने को दूषित करती हैं। इसी प्रकार रोग फैलते हैं।

आए दिन गाँव में कोई न कोई बच्चा दुर्घटना का शिकार हो जाता है। दिवाली पर पटाखे छोड़ते समय रामू के कपड़ों में आग लग गई। वह डरकर भागने लगा और हवा के कारण आग तेज़ी के साथ फैल गई। रम्मू धोबी का पाँच बरस का लड़का तालाब में गिर पड़ा। उसे निकाल तो लिया गया पर समय पर उपाय न किया जा सका, इसलिए मर गया। जग्गू घसियारे का जवान छोकरा साँप काटने से मर गया। पण्डित गंगाधर जी कहते थे कि यदि उसी समय हाथ कस कर बाँध दिया जाता और खून निकाल दिया जाता तो वह बच जाता। पण्डित जी के वहाँ पहुँते-पहुँचते ज़हर सारे बदन में रम गया था। लाला कन्हैया लाल के चार वर्ष के पोते ने गले में पैसा फँसा लिया। बच्चा कुछ मिनटों में ही छटपटा कर मर गया। रामलाल की बहू को मिरगी का दौरा पड़ता है। उसके घर के लोग इसे भूत-बाधा समझते हैं। एक बार उसकी दाँती भिच जाने से जीभ भी कट गई। सेवा न होने के कारण उसका रोग बढ़ता गया। एक दिन वह पानी भरने गई और

बेहोश होकर गिर पड़ी। शिवशंकर पटेल का लड़का घोड़े पर से गिर पड़ा। उसकी जांघ की हड्डी टूट गई। साथ के लड़के उसे किसी तरह लाद कर घर लाए। उनकी बेपरवाही से हड्डी को और भी अधिक चोट पहुँची। हड्डी का कोना चमड़ी चीर कर बाहर निकल आया। इस तरह मामूली-सी बीमारी दुर्घटना, या चोट के कारण कभी-कभी मनुष्य की जान पर आ बनती है।

आए दिन गाँवों में कोई न कोई बीमारी फैली रहती है। लोग परेशान रहते हैं। बरसात के बाद खेत की बुआई का काम मलेरिया के कारण रुका रहता है। चैत-बैसाख के महीनों में माता, कुत्ता खाँसी, खसरा आदि के कारण घर-घर बच्चे बीमार रहते हैं। घर की स्त्रियाँ कटाई-बुआई में सहायता नहीं कर पातीं और बीमारी के कारण साल के अन्त में बच्चे परीक्षा देने से रह जाते हैं। मरीज़ों का इतना ज़ोर रहता है कि गंगाधर जी को दम मारने की भी फ़ुरसत नहीं रहती। अतएव इस साल उन्होंने होली पर आस-पास के गाँव और तहसीलों के स्त्री-पुरुषों को इकट्ठा किया। पण्डित जी की सलाह की सब बड़ी कद्र करते थे, इसलिए काफी संख्या में लोग आए।

पण्डित जी ने कहना शुरू किया—"मैंने आप सब लोगों को आज इस लिए तकलीफ़ दी है कि हम सब इकट्ठे होकर इस बात पर विचार करें कि हमारे गाँवों से रोग और बीमारी किस तरह दूर हों। कुछ भाइयों ने मुझ से कहा कि शहरों की तरह यहाँ पर भी यदि अस्पताल खुल जाएँ, तभी बीमारी यहाँ से दूर हो सकती है। पर आप यकीन रखिए कि अस्पताल खुल जाने से ही बीमारी दूर नहीं होगी। यदि ऐसा होता तो शहरों में बीमारी नहीं फैलती। शहरों में भी आम डाक्टरों की यह शिकायत है कि लोगों को स्वास्थ्य की रक्षा करनी नहीं आती। आम घरों में डाक्टर, वैद्य या हकीम की बताई हिदायतों का पूरा-पूरा पालन नहीं किया जाता। नतीजा यह होता है कि दवाई और इलाज के बावजूद भी बीमार की हालत बिगड़ती ही जाती है। ठीक से सेवा न होने के कारण वह अपना खोया हुआ स्वास्थ्य जल्द प्राप्त नहीं कर पाता। परहेज़ न करने से बीमारी बढ़ जाती है और घर के अन्य लोग भी उसके शिकार हो जाते हैं।

"हम दूर क्यों जाएँ अपने गाँवों में ही देख लें। यदि घर में एक बच्चे को खसरा, माता, मोतीझरा या कुत्ता खाँसी हो जाए तो घर के कई बच्चे यहाँ तक की गाँव के अधिकांश बच्चों को यह बीमारी लग जाती है। इसका कारण यह है कि बचाव के लिए माताएँ मामूली सफ़ाई या परहेज़ भी घर में नहीं रखतीं। बीमार के आस-पास अन्य बच्चे भी खेलते-कूदते रहते हैं। ज़िद करने पर बीमार को रोटी दे दी जाती है। और जब हालत बिगड़ जाती है तब हकीम, वैद्य के पास दौड़ते हैं और यह आशा करते हैं कि दवाई अन्दर पहुँचते ही चमत्कार होना चाहिए। सोचिए, दवाई अकेली क्या कर सकती है? साथ में सेवा और परहेज़ की भी ज़रूरत है। पर वह आप लोग करते नहीं। दो दिन बाद जब फ़ायदा नज़र नहीं आता तो भूत-बाधा और झाड़-फूँक का सहारा लेते हैं। इस तरह से हमारे यहाँ बहुत से बीमारों की बहुत दुर्दशा होती है।

"वास्तव में बीमारी को तो हम खुद ही बुलाते हैं। गन्दगी और बदपरहेज़ी से ही बीमारी आती है। चाहे हमारे पास दो जोड़ी ही कपड़े हों, पर हमें नहाना रोज़ चाहिए। शरीर की सफ़ाई बहुत ज़रूरी है। उसके बाद पहनने, ओढ़ने-बिछौने की सफ़ाई का नम्बर आता है। गाँव के लोगों का यह विचार है कि सफ़ाई से तो केवल अमीर लोग ही रह सकते हैं। असल में यह बात नहीं है। गाँव के लोग शादी-ब्याह पर पैसा खर्चेंगे, ज़ेवर बनवाएँगे, मुकदमे में पैसा बरबाद कर देंगे, जुआ, नशा और व्यसनों में मेहनत की कमाई उड़ा देंगे, पर सफ़ाई से रहने, बच्चों को पढ़ाने, और बीमार का इलाज करवाने में पैसा खर्चना उन्हें अखरता है।"

"हमें श्रमदान करने की क्या जरूरत, अगली गर्मियों की छुट्टियों में इन लोगों से सड़क बनवा लेंगे!"

गंगाधर जी की यह बात सुनकर पंचायत के एक बुजुर्ग बोले—"हाँ भय्या, कहते तो ठीक हो। पर क्या करें, हमारे समाज के रीति-रिवाज ही ऐसे हैं।"

पण्डित गंगाधर जी बोले—"समाज के रीति-रिवाज बनानेवाले आप लोग ही हैं। कोशिश करके आप उन्हें बदल सकते हैं। जो कोई नया अच्छा तरीका चलाता है, उससे लोग लड़ते-झगड़ते हैं। उस दिन कुएँ पर लाला किशोरीलाल की माँ अपने बीमार बेटे के कपड़े धो रही थी। जुगलकिशोर की बहू कमला ने उसे ऐसा करने से मना किया तो वह लड़ने लगी कि क्या कुँआ तेरे बाप का है जो तू हमें रोकती है। अब भला आप बताएँ कि यदि कुएँ या तलाब का पानी गन्दा होगा तो क्या आप उसी पानी को पीकर बीमार नहीं होंगे? उसी तालाब पर कपड़े धुलते हैं, ढोर नहाते हैं, बर्तन मांजे जाते हैं और लोग नहाते-धोते तथा किनारे पर टट्टी पेशाब करते हैं। वहीं से स्त्रियाँ पीने का पानी भर कर ले जाती हैं। भला फिर हम लोग बीमारी से कैसे बच सकते हैं? घर झाड़ कर स्त्रियाँ कूड़ा गली में डाल देती हैं, ढोरों का गोबर पेशाब आँगन में सड़ता रहता है, उस पर मक्खियाँ भिन-भिनाती रहती हैं और वही हमारे भोजन पर बैठती हैं। हम घर ऐसे बनाते हैं कि उसमें हवा व धूप के लिए झरोखे या खिड़कियाँ नहीं रखते। ऐसी गन्दगी में हम लोग निरोग कैसे रह सकते हैं?

"हम न केवल रहन-सहन के विषय में ग़लती करते हैं, बल्कि खाने-पीने के मामले में भी हम बहुत भूल करते हैं। आप में से बहुतों के घर में ढोर हैं, पर बच्चों को छाछ तक नसीब नहीं होती। सारा दूध बेच दिया जाता है। आप अच्छा अनाज बेच देते हैं और बचा हुआ घुना अनाज अपने लिए रख लेते हैं। सब्ज़ी, मौसमी आदि फल खाने का लाभ गाँववालों ने कभी समझा ही नहीं। बस वही रोटी, दाल और चटनी से पेट भरते हैं। सन्तुलित भोजन के लिए जिसमें शरीर की ज़रूरतें पूरा करने के सभी तत्व हों अधिक पैसे की ज़रूरत नहीं है। पर भोजन का सही चुनाव और उसे ठीक से पकाना ज़रूरी है। यह बात समझनी बहुत ज़रूरी है कि यदि आप तन्दुरुस्त रहेंगे तो अधिक मेहनत कर सकेंगे और अधिक कमाएँगे। बीमारी पर पैसा अलग खर्च होता है और स्वास्थ्य अलग खराब होता है।"

अलगू चौधरी ने बीच में टोक कर कहा—"गंगाधर जी आप का कहना ठीक है। पर बीमार की सेवा के लिए घरों में एक तो अलग कमरे की सुविधा नहीं होती, दूसरी बात हमारी औरतों को बीमार को ठीक से उठाना, बिठाना, नहलाना, दवाई देना, उसका भोजन तैयार करना ही नहीं आता। इस लिए जहाँ एक ओर इस बात की ज़रूरत है कि गाँव में सफ़ाई आन्दोलन चलाया जाए, वहाँ इस बात का भी इतज़ाम होना चाहिए कि हर एक गाँव में एक-दो कमरे गाँव से कुछ हट कर हों जहाँ बीमार को रखने और उसकी सेवा की सुविधा हो।"

इस पर गंगाधर जी बोले—"चौधरी जी आपकी बात मुझे बहुत पसन्द आई। गाँव से गन्दगी दूर करने के लिए हम सबको सप्ताह में एक दिन श्रमदान करना चाहिए। घरों, गलियों, चौगानों, तलाबों, कुओं आदि की सफ़ाई की ओर पहले ध्यान दिया जाए। कूड़ा इकट्ठा करके जला दिया जाए। इससे कीमती खाद भी मिलेगी। रही बीमार की सेवा के लिए हर गाँव में कमरों का प्रबन्ध करने की बात, सो मुशकिल नहीं है। गाँव का सुधार खुद गाँववालों की कोशिश पर ही निर्भर है। हम सब मिल कर पंचायत घर के पास ही अपने-अपने गाँव में दो-दो कमरे खड़े कर सकते हैं। छूत की बीमारी का जो कोई भी मरीज़ हो उसे वहाँ लाकर रखा जाए। सब कुछ हो सकता है यदि गाँव का प्रत्येक व्यक्ति अपनी-अपनी ज़िम्मेदारी सँभालने में सहयोग दे।"

पण्डित जी के भाषण से मन्त्र-मुग्ध श्रोताओं में आत्म-विश्वास की लहर दौड़ गई और सबने वहीं प्रण किया कि वे गाँवों से रोगों को भगाने के लिए मिल-जुल कर प्रयत्न करेंगे और तब तक दम न लेंगे जब तक कि अपने उद्देश्य की प्राप्ति न कर लेंगे।

★

हमारा भविष्य—[पृष्ठ २० का शेषांश]

गाँववालों से कुछ कहना-सुनना छोड़ दिया। हमने गाँव को अधिक से अधिक आकर्षक बनाने के तरीकों पर सोचा और इस लिए नाटक, प्रदर्शनी, संगीत, मेले, खेल-तमाशे आदि की योजनाएँ बनाईं जिससे गाँववाले जुआ आदि खेलने की गन्दी आदतें छोड़ दें। अन्त में हमें गाँववालों का सहयोग मिला और हम अपने कार्य में सफल हुए।

गान्धी जी के इस देश भारत में सामुदायिक विकास-योजनाओं का आरम्भ होना स्वाभाविक ही है। गान्धी जी का कहना था कि साधन और साध्य में वही सम्बन्ध है, जो बीज और वृक्ष में है। आज देश और गाँव के व्यक्ति ही साधन हैं और उनकी उन्नति साध्य है।

★

दो गाँवों के विकास की कहानी

डी० पी० भारद्वाज

दिल्ली राज्य के गाँवों में आज एक महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहा है जो केवल भौतिक चीज़ों में ही दृष्टिगोचर नहीं होता, बल्कि विचारों में, दृष्टिकोण में, आपसी सम्बन्धों में और ग्रामवासियों की अनेक समस्याओं में भी स्पष्ट है। अज्ञान के अन्धकार से निकलकर आज वहाँ की जनता स्वयं अपने विकास के कार्यक्रमों में भाग लेने को तत्पर है। "हम अपना कर्त्तव्य पूरा कर चुके और हमारे साधन भी समाप्त हो गए हैं। अब कहाँ है वह सरकारी सहायता?" इस प्रकार गाँववाले चिल्लाते रहते हैं। आज जनता के चन्दे की अपेक्षा सरकारी चन्दा कम भी पड़ जाता है और आसानी से मिल भी नहीं पाता। सरकार के लिए बड़ी अजीब परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है। क्योंकि गाँववालों का कहना है कि सरकार उनके धैर्य की परीक्षा करती है। कभी-कभी वे थकान अनुभव करते हैं, परन्तु राह पर आगे बढ़ते ही जाते हैं।

वास्तव में उनके साधन समाप्त नहीं हुए हैं। उनके पास असीम मानव शक्ति है, सजीव आत्मा है और काम करने का दृढ़ निश्चय है, फिर उन्हें सरकार का मुँह क्यों ताकना चाहिए? यह उनका अपना काम है, अपना कार्यक्रम है, इसलिए वे अपनी नवशक्तियों से उसे आरम्भ कर सकते हैं और नई ज़मीन, नए गाँव का निर्माण कर सकते हैं।

आईये हम आपको अपने गाँव की कहानी सुनाएँ। हमारा विकास खण्ड (अलीपुर) १०५ गाँवों का है। कुल जनसंख्या करीब सवा लाख है और क्षेत्रफल १,२४,५२८ एकड़ है। हमारे खण्ड का सौभाग्य है कि २ अक्तूबर, १९५२ को जब भारत में सामुदायिक विकास-योजनाओं का श्रीगणेश किया गया था, तब प्रधान मंत्री ने इसका उद्घाटन किया था। शुरू के कुछ महीने गाँव में काम करने वालों के चुनाव, गाँव के विकास के लिए सारे गाँवों में समितियों के बनाने, गाँव की मौजूदा परिस्थितियों के निरीक्षण और उन्हें सुविधाएँ देने तथा जनता की ज़रूरतों को समझने में लग गए। यह पूरा विकास-कार्यक्रम जनता के घनिष्ठ सहयोग से बनाया गया था।

दिल्ली से सात मील दूर स्थित शमेपुर गाँव के किसानों से मिलिए। विकास-योजना से पहले कृषि की दृष्टि से वहाँ की ज़मीन काफ़ी उपजाऊ थी। किसानों के पास साधन थे पर वे उनका समुचित उपयोग करना नहीं जानते थे। शुरू में ज़मीन को सुधारने और खेती के लिए ज्यादा से ज्यादा सुविधाएँ देने की ओर ख़ास ध्यान दिया गया। पौधों की रक्षा के लिए अच्छे बीज, अच्छी खाद, औज़ार और हानिकर कीटाणुओं का नाश करना ज़रूरी है। कृषि की नवीनतम खोजों से भी वे परिचित हो चुके हैं। गाँव के समीप ही अच्छी खाद भी उपलब्ध थी। परन्तु यह खाद समीप होते हुए भी बहुत दूर थी, क्योंकि किसानों ने उसे सुलभ समझकर कभी उसकी ओर ध्यान नहीं दिया था। इतनी प्राकृतिक सुविधाएँ होने के साथ ही राजधानी में फल, सब्ज़ी और फूलों के बिकने की काफ़ी गुंजाइश थी। केवल किसानों को ठीक राह दिखाने भर की देर थी।

उनका ठीक प्रकार से संगठन किया गया और उसका परिणाम यह हुआ कि आज शमेपुर का प्रत्येक किसान सब्ज़ी पैदा करता है और अपने कार्य पर गर्व करता हुआ खेती के लिए नए प्रयोग करता है। अधिकांश किसान एक कदम और भी आगे बढ़ गए हैं। उन्होंने सब्ज़ी पैदा करनेवालों की एक सहकारी समिति बना ली है। यह उनके लिए वरदान सिद्ध हुई है। क्योंकि इससे उन्हें विभिन्न वस्तुएँ पैदा करने और बेचने में सहूलियत रहती है। अब यह गाँव खूब उपजाऊ, हरी सब्ज़ियों से भरपूर, फसलों से लहलहाता हुआ और बाग़-बगीचों से भरा हुआ है।

१९१ परिवारों के इस गाँव को ५०० छात्रोंवाले अपने एक हाई स्कूल और लगभग ८० छात्राओं के अपने प्राईमरी स्कूल पर गर्व है। विकास-योजना के पूर्व इस स्कूल में केवल ४ कमरे थे, परन्तु अब गाँववालों ने अपने श्रम से १२ कमरे बना लिए हैं। यदि कोई अतिथि गाँव में आता है तो गाँववाले बड़े चाव से उसे अपना स्कूल दिखाते हैं। गाँव की सारी सड़कें पक्की बनी हुई हैं। धीरे-धीरे वे अपने घरों को भी पक्का बना रहे हैं और उनमें से बहुत से तो अपने घर नए नमूनों के बना भी चुके हैं।

गाँववालों की इच्छा अपने जीवन स्तर को ऊँचा उठाने की रहती है, परन्तु वे सिर्फ़ अपनी ही उन्नति के बारे में सोचते हैं। स्कूल निर्माण, अच्छे कुएँ और सड़कों को पक्का करने के अतिरिक्त सामुदायिक कार्यक्रम की अन्य बातें उन्हें नहीं सुहातीं। सम्भवतः यह उनके राजधानी के समीप रहने और उनपर नागरिक सभ्यता की छाप पड़ने का परिणाम है। इसके लिए कुछ कोशिशें की जा रही हैं। गाँववाले अब सामुदायिक केन्द्र, बच्चों के खेलने के मैदान, सफ़ाई सम्बन्धी सुविधाओं, गाँव के तालाब और अच्छी सड़कों आदि के बारे में सोचने लगे हैं।

दूसरा उसका पड़ोसी गाँव बुराड़ी है। यह गाँव राजधानी से लगभग सात मील दूर है और इसकी जनसंख्या २,१६० है तथा इसमें ३४० परिवार हैं। शमेपुर की तरह बुराड़ी में भी पर्याप्त साधन हैं। उनका उचित विकास न होने का मुख्य कारण उचित नेतृत्व का अभाव है। १९५२ की सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत आने के कारण गाँववालों के मानसिक दृष्टिकोण में एक शुभ परिवर्तन हुआ है। गाँव के कार्यकर्त्ता बड़े अध्यवसाय से गाँववालों को विकास-योजना में सहयोग देने के लिए तैयार कर रहे हैं।

योजना के निर्माण से लेकर उसे कार्यान्वित करने तक बराबर जनता का सहयोग लिया गया। शुरू में सारे गाँववालों की एक बैठक हुई जिसमें सामुदायिक विकास-योजना के अन्तर्गत इस कार्यक्रम पर बहस हुई। गाँववालों के सामने आज़ादी के बाद की नई तस्वीर रखी गई और उसे पूरा करने के लिए आवश्यक तरीके बताए गए। बहुत से गाँववालों को यह नए तरीके पसन्द नहीं आए। उन लोगों का कहना था कि जब सरकार नगरवासियों को यह सब सुविधाएँ देती है तो उनको क्यों नहीं दे सकती? जब अंग्रेज़ तक उनका ख्याल रखते थे तो वर्तमान सरकार जो उनकी अपनी ही है, उनका ख्याल क्यों नहीं रख सकती? उनको विश्वास दिलाना बड़ा मुश्किल था, लेकिन नई पीढ़ी की समझ में यह बात आ गई। वह इस परिवर्तन के लिए तैयार थी। अन्त में नए विचार के युवकों ने पुरातन पन्थी बूढ़ों पर विजय पाई और बिना किसी जाति और वर्ग के भेद के ३० सदस्यों की एक आम समिति बनाई गई। इस चुनाव में कोई विरोध नहीं हुआ, क्योंकि प्रत्येक वर्ग का अपना-अपना प्रतिनिधि था। उसके बाद ही ग्रामसेवक के निरीक्षण में ११ प्रबन्धक समितियाँ बनाई गईं। यह उपसमितियाँ अपने-अपने क्षेत्र में विकास कार्य के लिए स्वयं उत्तरदायी थीं। विकास के उद्देश्य और कार्यों का अनुक्रम निश्चित हो गया और काम शुरू हो गया। प्रत्येक उपसमिति एक दूसरे से अच्छा काम करने के लिए प्रयत्नशील थी। आप जानना चाहेंगे कि इसका परिणाम क्या हुआ?

इस गाँव में कृषि के विकास के लिए बादली डम्पिंग ग्राउन्ड से २,००० टन खाद लाकर उपयोग में लाई जा चुकी है। इससे यहाँ अनाज और सब्ज़ी का १० से १५ प्रतिशत तक की वृद्धि हुई। यद्यपि गाँव में कोई बाग़ नहीं था, परन्तु फिर भी वहाँ फल-फूल पैदा करने की काफ़ी गुंजाइश थी। यहाँ फलों के ३०,००० पेड़ लगाए जा चुके हैं। हर परिवार में अब नए और अच्छे बीजों का प्रयोग होता है और कुओं के मालिकों ने या तो पुराने कुओं की मरम्मत करवा ली है या नए कुएँ खुदवा लिए हैं। कुल मिलाकर यहाँ ६४ कुएँ और ६ नलकूप हैं जिनसे ज्यादा ज़मीन पर खेती हो सकी है। करीब २०० एकड़ बंजर भूमि का भी उद्धार किया गया। किसान नए तरीकों से खेती कर रहे हैं। वे खुश हैं कि उनकी आमदनी बढ़ गई है। कुछ लोगों ने मिल-जुल कर खेती करने के लिए सहकारी समिति बना ली है।

कृषि की उन्नति के लिए नए-नए तरीके सोचे जा रहे हैं, लेकिन पैदावार में जो वृद्धि होती है उसके बारे में लोगों का मतभेद है। कुछ कहते हैं—"सौ साल पुराने इस धन्धे को छोड़कर हम शहर में कोई रोज़गार क्यों न करें?" "हमारी चीज़ों के दाम तो गिर गए, परन्तु दूसरी चीज़ों के दाम क्यों नहीं गिरते?" "खेती में अब कुछ आमदनी नहीं रही, जितनी मेहनत हम करते हैं, उतना हमें फ़ायदा नहीं होता।" इस गाँव के ही नहीं सब गाँववालों के यही विचार हैं। अर्थशास्त्र के सिद्धान्त उनकी समझ से बाहर हैं, फिर भी इतना वे समझते हैं कि कीमतों के गिरने पर भी पैदावार बढ़ाने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं है। सहकारी खेती से हमें एक क्षीण आशा होती है।

कुछ प्रगतिशील किसान इस संगठन में सम्मिलित हो गए हैं, दूसरे इस बारे में अभी सोच रहे हैं। अब भी क्या हम अपने किसानों को दकियानूसी विचारोंवाले कह सकते हैं? जहाँ तक शिक्षा का सम्बन्ध है, बुराड़ी में केवल एक प्राईमरी स्कूल था। युवकों ने इस बारे में बड़ा महत्वपूर्ण काम किया। शहर के अच्छे स्कूलों में पढ़ने के कारण वे जानते थे कि विकास-योजना को पूरा करने में अज्ञानता के कारण क्या-क्या कठिनाइयाँ हैं। स्थान का अभाव होने के कारण केवल कुछ विद्यार्थी किसी पेड़ के नीचे पढ़ लेते थे। लड़के-लड़कियों के लिए अच्छे स्कूल की अत्यन्त आवश्यकता थी। अब बुराड़ी को अपने लड़कों के स्कूल पर गर्व है। गाँववालों ने इस काम के लिए ४० बीघा ज़मीन और १५,००० रुपए नक़द दान दिया। यहाँ एक बालिका विद्यालय भी है जिसमें १२५ छात्राएँ और ५ अध्यापिकाएँ हैं। इस विद्यालय के बनाने में ११,००० रुपया

खर्च हुआ। आधा खर्च गाँववालों ने दिया और अब वे चाहते हैं कि इसे मिडिल स्कूल बना दिया जाए।

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि गाँव में कोई चौपाल नहीं है। अगर आप गाँव में जाएँ तो गाँववाले आपको सामुदायिक केन्द्र में ले जाएँगे और बड़े गर्व से इसकी पूरी कहानी सुनाएँगे। यह केन्द्र अत्यन्त आकर्षक है और जनता के सहयोग का जीता-जागता नमूना है। गाँववालों ने १,४०० रुपए स्वयं खर्च किए और स्थानीय विकास-योजना के अन्तर्गत ५० प्रतिशत सहायता उन्हें मिल गई। गाँव के दूसरे सिरे पर ऐसा ही एक अन्य आकर्षक भवन बीज जमा करने का गोदाम है। इस गोदाम में १०,०० मन अनाज आ सकता है। इसकी देख-रेख ६५ सदस्यों की एक समिति के हाथों में है जो और भी बहुत से काम करती है। गाँव की ६२० बीघा ज़मीन चरागाह के लिए और ७० बीघा मछली पालने और जानवरों के तालाब के लिए है। काम बड़ी तेज़ी से हो रहा है। सर्वसाधारण की यह संस्थाएँ अपनी प्रगति और जनता की एकता की कहानी स्वयं ही कह रही हैं।

इतनी प्रगति के होते हुए भी गाँव बड़ा गन्दा दिखाई देता है। क्यों? क्या गाँववाले इससे अपरिचित हैं? गाँववाले इस बात को समझते हैं, लेकिन सफ़ाई के लिए गाँव में कई कठिनाइयाँ हैं। जमना नदी के किनारे बसा होने के कारण कई बार इसमें बाढ़ आ जाती है। बरसात के दिनों में यहाँ पहुँचना भी मुश्किल हो जाता है। ईंटों की सड़क से हमारा काम नहीं चलता। हमारे पास ५,००० पशु और २३७ बैलगाड़ियाँ हैं। ईंट की सड़क उनका बोझा नहीं सँभाल पाती और टूट जाती है। इसलिए हम उसे पत्थर या सीमेन्ट की बनाना चाहते हैं। लेकिन हमारी कठिनाई यह है कि हम चन्दा पहले ही काफ़ी दे चुके हैं और इस पर काफ़ी खर्च आएगा। तो इस समस्या का समाधान कैसे हो? गाँववालों का एक ही उत्तर था कि हम अपने तरीके से सोचते हैं और धीरे-धीरे काम करते हैं।

बुराड़ी गाँव में ४ आदर्श कुएँ और छः आम शौचालय हैं। गाँववालों को गर्व है कि उन में जागृति फैल चुकी है। समय के साथ-साथ उनकी ज़िन्दगी भी बदल रही है। उन्नत और समृद्ध जीवन बिताने की आकांक्षाएँ उनमें हिलोरें ले रही हैं, यद्यपि कभी-कभी उनके मन में सन्देह अवश्य उठता है। सरकार के आश्वासन दिलाने पर भी भय उनका एकदम पीछा नहीं छोड़ रहा है।

अपनी सफलताओं पर गर्वीला और अपने दोषों से परिचित, यही बुराड़ी गाँव है। अभी वहाँ बहुत कुछ करना बाकी है। वातावरण के अनुकूल होते हुए भी वह अभी तक स्त्री जाति के प्रति कुछ नहीं कर पाया है। पारस्परिक वैमनस्य का वहाँ अवश्य लोप हो गया है।

बुराड़ी की सफलता का बहुत कुछ श्रेय मुखमेलपुर गाँव को है जो सामुदायिक विकास-योजना कार्यक्रम का एक प्रकार से पथप्रदर्शक है। ऐसा लगता है जैसे मुखमेलपुर गाँव एक ही रात में आदर्श गाँव बन गया हो। स्वयं आगे बढ़ने की प्रेरणा बड़ी तेज़ी से सुंगरपुर, बकाउली आदि छोटे परन्तु जागरूक और पथप्रदर्शक गाँवों में फैल गई है। सुंगरपुर गाँव को दिल्ली राज्य का सबसे अधिक साफ-सुथरा गाँव होने पर गर्व है। पिछली बार इसमें बहुत ओला पड़ा था। बाढ़ के कारण भी लोगों को बड़ा नुकसान उठाना पड़ा, लेकिन काम करने का उनका उत्साह कभी कम नहीं हुआ। उन्होंने गाँव को फिर से बनाना शुरू कर दिया है। नष्ट हुए घर और संस्थाएँ फिर से बन रही हैं। उनका कहना है— हम इंसान हैं, हम एक हैं और मिल कर काम करेंगे।'

घोगा और भवाना गाँव सामुदायिक केन्द्र, स्कूल, सड़कें, तालाब, गोदाम, और पत्थर की सड़कें बनाने में बहुत आगे बढ़ गए हैं। यहाँ के लोगों ने बेकारी की समस्या को भी हल कर लिया है। ईंटों का सहकारी भट्टा, सहकारी औद्योगिक समिति, डेरी फार्मिंग सोसायटी आदि उसकी सफलता के प्रतीक हैं।

जनता के ऐच्छिक सहयोग द्वारा हमारा ग्राम विकास कार्य अनेक उत्थान-पतन के बीच होता हुआ सफलता की उस सीमा तक पहुँच चुका है, जहाँ वह जनता का कार्यक्रम बन जाता है जिसमें सरकार का भी सहयोग है। मार्च १९५५ तक दिल्ली राज्य में जनता द्वारा दी हुई नक़द सहायता ११,९७,६७३ रुपए थी, जिसके मुक़ाबले सरकार की सहायता अपेक्षाकृत बहुत कम थी।

इस सबके बीच सबसे अधिक सन्तोषजनक बात यह है कि समृद्ध जीवन के लिए संघर्ष करती हुई जनता के दृष्टिकोण में परिवर्तन आ रहा है।

★

सिर के दर्द की दवा

के० बालचन्द्रन्

एक सामुदायिक विकास खण्ड के कई दूरवर्ती गाँवों के लोग अब भी इस बात में विश्वास करते हैं कि बीमारी में दवाइयों से कहीं अधिक कारगर मन्त्र और जादू-टोने होते हैं।

अगर आप उनसे बहस करें तो वे यह दलील देंगे कि कुछ चीज़ें इन्सान की बुद्धि से परे की होती हैं, जैसे बच्चे के जन्म के समय दवाई से कोई लाभ नहीं होता, केवल अलौकिक शक्तियाँ ही लाभ पहुँचा सकती हैं।

इन्हीं गाँवों का एक निवासी एक दिन अपने गाँव से कुछ मील की दूरी पर स्थित विकास-योजना के प्रधान कार्यालय में आया। उसकी तबीयत ठीक नहीं थी। अन्य किसी सहायता के अभाव में वह हाल ही में खोली गई विकास-योजना डिस्पैन्सरी में गया और उसने डाक्टर साहब से कुछ गोलियाँ लेकर खाईं। गाँव लौटने पर उसने यह बात अपने गाँववालों को बताई। गाँववालों को इस पर बहुत क्रोध आया। तुरन्त गाँव की पंचायत बुलाई गई जिसमें उस व्यक्ति पर गाँव में दवाइयाँ लाकर विदेशी बीमारियों को गाँव का रास्ता दिखाने के अभियोग में जुर्माना किया गया।

यह बात तब की है जब विकास-योजना की नींव रखे एक महीना ही हुआ था। दो साल बीत गए। लोग धीरे-धीरे दवाइयों की उपयोगिता महसूस करने लगे। यहाँ तक कि उसी क्षेत्र में एक डाक्टरी सहायता केन्द्र खोल दिया गया जिसकी देख-रेख का भार एक योग्य कम्पाऊंडर को सौंपा गया जो वहीं का निवासी था।

विकास-योजना अधिकारी से गाँववालों के विचार छुपे नहीं थे। लेकिन जब उसे यह मालूम हुआ कि गाँव का प्रशिक्षित कम्पाऊंडर भी मौका पड़ने पर दवाइयों की बजाय मन्त्रों की शरण लेता है तो उसे बहुत दुख हुआ।

एक बार उस विकास-योजना-अधिकारी को रात उसी गाँव में काटनी पड़ी थी। अचानक उसके सिर में ज़ोर का दर्द शुरू हो गया। कम्पाऊडर बुलाया गया। वह बोला—"अगर आप के सिर में वास्तव में सख्त-दर्द है तो मैं उसे अपने मन्त्रों से एकदम दूर कर सकता हूँ।"

विकास-योजना अधिकारी ने भी आनन्द लेने के विचार से स्वीकृति दे दी। कम्पाऊंडर ने अधिकारी के माथे और सिर पर कुछ देर तक अपनी उँगलियाँ फेरीं और साथ-साथ धीमी आवाज़ से कुछ मन्त्रों का जाप करता रहा। बीच बीच में वह अधिकारी के सिर पर फूँक भी मारता रहा।

कुछ देर यह टोना करने के बाद कम्पाऊंडर ने अधिकारी से पूछा—"अब आपकी तबीयत कैसी है?"

जवाब मिला—"उतनी ही बुरी जितनी पहले थी।"

कम्पाऊंडर को विश्वास नहीं हुआ। अविश्वास के स्वर में वह बोला—"नहीं जनाब, मैं नहीं मान सकता। मुझे तो सिर का दर्द साफ़ भागता दिखाई दे रहा है। हाँ, अगर आप अब एस्पीन की टिकियाँ और ले लें, तो बाकी दर्द भी गायब हो जाएगा।"

★

"सामुदायिक विकास-योजनाओं के कारण ही आप को इतनी सूरतें नज़र आ रही हैं।"

प्रगति के पथ पर

योजना-क्षेत्रों में कुटीर उद्योगों का विकास

सामुदायिक योजना प्रशासन ने कुछ चुने हुए विकास खण्डों में लागू करने के लिए एक विकास योजना स्वीकार की है, जिससे इन क्षेत्रों के छोटे और कुटीर उद्योगों में अब से तिगुने लोग रोज़गार पा सकेंगे।

आरम्भ में यह योजना देश के विभिन्न भागों के २६ प्रारम्भिक योजना खण्डों में लागू की जाएगी। इसके संचालन के लिए एक कार्य समिति संगठित की गई है, जिसके सभापति सामुदायिक विकास-योजनाओं के प्रशासक हैं। इसमें व्यापार और उद्योग, उत्पादन, वित्त तथा खाद्य और कृषि मंत्रालयों के प्रतिनिधि भी होंगे। इनके अलावा छोटे और कुटीर उद्योगों से सम्बन्ध रखनेवाले अखिल भारतीय बोर्डों के प्रतिनिधि भी इस समिति के सदस्य होंगे।

कार्य समिति ने राज्य-सरकारों से अपने क्षेत्रों में जाँच-पड़ताल के लिए कहा है, जिससे यह पता चल सके कि किस क्षेत्र में कौन-सा उद्योग शुरू किया जा सकता है। योजना के काम को दो भागों में बाँट दिया गया है। एक भाग में वे काम हैं, जो शीघ्र ही शुरू किए जाएँगे और दूसरे में वे जिन्हें बाद में हाथ में लिया जाएगा। राज्य सरकारों से अपने क्षेत्र में प्रारम्भिक योजनाओं के विकास का कार्यक्रम तैयार करने के लिए भी कहा गया है।

सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन ने राज्य सरकारों को उन क्षेत्रों के आँकड़े भी भेजे हैं जिनमें यह बताया गया है कि किस-किस व्यवसाय में कितने लोग लगे हैं। इन आँकड़ों से राज्य सरकारों को अपना कार्यक्रम तैयार करने में सहायता मिलेगी।

इन आँकड़ों को तैयार करते समय विभिन्न उद्योगों में रोज़गार प्राप्त करने के लक्ष्य निर्धारित किए गए थे। जाँच-पड़ताल से पता चला कि किसान और खेतिहर मज़दूर निर्धारित लक्ष्य से अधिक हैं। यातायात कर्मचारियों, कारीगरों और कुटीर उद्योगों के मज़दूरों की संख्या निर्धारित लक्ष्य से कम थी। इस कमी को प्रारम्भिक योजनाओं के द्वारा पूरा किया जाएगा।

अभी गाँवों के सिर्फ ८ प्रतिशत लोग छोटे धन्धों में लगे हैं। इस योजना कार्यान्वित होने पर २२ प्रतिशत लोग काम पा जाएँगे।

प्रत्येक योजना के लिए कार्यक्रम तैयार करते समय विभिन्न व्यवसायों के लिए रोज़गार का निर्धारित लक्ष्य ध्यान में रखा जाएगा। साथ ही यह भी ध्यान रखा जाएगा कि व्यवसायों के शुरू करने के लिए उचित व्यक्ति और कच्चे माल प्राप्त करने और तैयार माल बेचने की क्या सम्भावना है।

राज्य सरकारों को यह सुझाव दिया गया है कि जब उनके क्षेत्र में किसी नए उद्योग की स्थापना हो, तो वे इस बात का ध्यान रखें कि पहले से काम करनेवालों को पूरा काम मिल जाने पर ही, नए लोगों को रखा जाए।

खादी उद्योग का विकास

भारत सरकार ने खादी उद्योग के विकास के लिए अखिल भारतीय खादी तथा ग्रामोद्योग मण्डल को १० लाख १० हज़ार रुपए की सहायता देना स्वीकार किया है।

अम्बर चर्खे के चलाने और बनाने का प्रशिक्षण देने के लिए ४,६५,००० रुपए और खर्च होंगे। इससे १ हज़ार प्रशिक्षणार्थियों और ५०० बढ़इयों को वृत्तियाँ तथा उनकी फीस दी जाएगी।

वस्त्र स्वावलम्बन योजना के लिए इस वित्त वर्ष में ३ लाख रुपये का अनुदान और स्वीकार किया गया है।

महीन सूत की कताई के लिए ५० हज़ार रुपए और अमृतसर में एक विशाल खादी प्रदर्शनी का आयोजन करने के लिए भी १ लाख रुपए अखिल भारतीय खादी तथा ग्रामोद्योग मण्डल को दिया गया है।

सोनीपत योजना-क्षेत्र में डाक्टर ब्ल्यूशर

जर्मनी संघीय गणराज्य (पश्चिमी जर्मनी) के वाइस चांसलर (उपप्रधान मंत्री) डाक्टर ब्ल्यूशर ने १३ जनवरी, को प्रातःकाल सोनीपत सामुदायिक विकास-योजना क्षेत्र के दो गाँवों का निरीक्षण किया। उन्होंने गाँववालों के बीच भाषण करते हुए यह आशा प्रकट की कि भारत और उनके देश के मध्य सम्बन्ध घनिष्टतर होते जाएँगे।

सोनीपत से वह थारू उल्देपुर गाँव गए। पंजाब के वर्तमान मुख्यमंत्री सरदार प्रतापसिंह कैरों और सैकड़ों ग्राम-वासियों ने उनका वहाँ स्वागत किया। इस गाँव के गृह विज्ञान तथा केलिको छपाई केन्द्र और बुनियादी स्कूल को उन्होंने देखा। इस अवसर पर स्कूल के विद्यार्थियों ने ग्राम नृत्य का सुन्दर प्रदर्शन किया। पास के दूसरे गाँव में डाक्टर ब्ल्यूशर ने प्रसूतिका केन्द्र, दस्तकारी और सामुदायिक केन्द्रों को देखा। गृह उद्योग केन्द्र के बने खिलौने उन्हें भेंट किए गए। इस अवसर पर एक पशु-प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया।

ग्रामवासियों के स्वागत भाषण के उत्तर में डाक्टर ब्ल्यूशर ने कहा—"मेरा स्वागत वस्तुतः मेरे देश का सम्मान है। भारत, जर्मनी तथा अन्य सभी देशों की जनता शान्ति चाहती है। सभी मानव परस्पर मैत्री से रहना चाहते हैं। जर्मनी के निवासियों की यह इच्छा है कि जर्मनी तथा भारत की मैत्री संसार में शान्ति-स्थापना में सहायक हो। भारत का यह सौभाग्य है कि देश की बाग-डोर ऐसे नेताओं के हाथ में है, जिन्हें निरन्तर देश की भलाई का ध्यान रहता है।"

अन्त में उन्होंने आशा प्रकट की कि जर्मनी और भारत की मैत्री दिनोंदिन दृढ़ होती जाएगी।

डाक्टर ब्ल्यूशर ने दोनों गाँवों के विकास कार्यों के लिए, अपनी ओर से ५०१ रुपए के दान की घोषणा की।

भारत के योजना-क्षेत्रों के अध्ययन से प्रेरणा व सहायता

अफ़ग़ानिस्तान सरकार के उच्च अधिकारियों के एक प्रतिनिधि मण्डल ने भारत के सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन के अधिकारियों से भेंट की। इस मण्डलमें ४ सदस्य थे और इसे संयुक्त राष्ट्र संघ की ओर से भारत की सामुदायिक विकास योजनाओं और प्रशिक्षण केन्द्रों का दौरा करने भेजा गया है। बैठक में अफ़ग़ान अधिकारियों ने अफ़ग़ानिस्तान के सामुदायिक विकास-कार्य में आने वाली समस्याओं पर भारतीय अधिकारियों से विचार-विमर्श किया।

यह प्रतिनिधि मण्डल १ जनवरी से भारत का दौरा कर रहा था और इसने गान्धी ग्राम, बम्बई का वल्लभ विद्यानगर, राजस्थान की सुमेरपुर सामुदायिक योजना, इलाहाबाद की कृषि संस्था और समाज संगठन प्रशिक्षण केन्द्र, बरूशी का तालाब विस्तार केन्द्र और हिमाचल प्रदेश तथा नीलोखेड़ी के सामुदायिक विकास खण्ड देखे।

इस बातचीत में अफ़ग़ान अधिकारियों ने कहा कि भारत और लंका के सामुदायिक विकास-कार्य को देख कर हमें अपने देश के विकास-कार्य के खर्च और समय का अन्दाज़ करने में सहायता मिलेगी। अफ़ग़ानिस्तान में परीक्षण के तौर पर सन् १९५४ में ४० गाँवों में विकास कार्य आरम्भ किया गया था और अब इसे ७० गाँवों में और बढ़ा दिया गया है। इससे पहले इस काम के लिए कार्यकर्त्ताओं को शिक्षा देने की व्यवस्था की गई थी। अफ़ग़ान अधिकारियों को बताया गया कि यद्यपि ग्राम अध्यापकों को सामुदायिक विकास कार्य में लगाया जा सकता है पर फिर भी वे ग्रामसेवकों का स्थान नहीं ले सकते। वे केवल ग्रामसेवकों की सहायता कर सकते हैं।

प्रतिनिधि मण्डल के सदस्यों ने यह भी प्रकट किया कि हम भारत के सामुदायिक विकास-कार्य की प्रगति से और विशेष कर कृषि और समाज कल्याण के क्षेत्र में जो प्रगति हुई है उससे बहुत प्रभावित हुए हैं।

★

धान के खेत में मढ़ाई

भारत की एकता का निर्माण

(सरदार वल्लभ भाई पटेल)

भारत की एकता के निर्माता सरदार पटेल के २७ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाषणों का यह संग्रह हाल ही में प्रकाशित हुआ है।

१५ अगस्त १९४७ को जब भारत स्वाधीन हुआ, तब भारत में ९ प्रान्तों के अतिरिक्त ५८४ रियासतें थीं। इन ५८४ रियासतों में केवल हैदराबाद, काश्मीर और मैसूर यही ३ रियासतें ऐसी थीं, जो आकार और आबादी के लिहाज से पृथक् राज्यों का रूप धारण कर सकती थीं। अधिकांश रियासतें बहुत छोटी थीं और २०२ रियासत तो ऐसी थीं, जिनका क्षेत्रफल १० वर्गमील से अधिक नहीं था। उस पर भी ये सब की सब रियासतें शासन की पृथक् इकाइयाँ बनी हुई थीं।

भारत के प्रथम उपप्रधान मन्त्री सरदार वल्लभ भाई पटेल ने दो वर्षों के भीतर ही सम्पूर्ण भारत को एक बना दिया। उक्त ५८४ रियासतों का ५,८८,००० वर्ग मील क्षेत्रफल और १० करोड़ के लगभग आबादी इस अल्प-काल ही में भारत के आन्तरिक भाग बन गए। उसी तरह, जिस तरह भारत के अन्य राज्य हैं। हैदराबाद, मैसूर और काश्मीर को पृथक्-पृथक् और अन्य कितनी ही रियासतों के संघ बनाकर उन्हें 'बी' श्रेणी के राज्य बना दिया गया। सैकड़ों छोटी-छोटी रियासतें आसपास के बड़े राज्यों में मिला दी गईं। परिणाम यह हुआ कि भारत भर में पूर्ण प्रजातन्त्र स्थापित हो गया और सन १९५२ का निर्वाचन समूचे देश में बालिग मताधिकार के आधार पर सम्पन्न हुआ।

इस नवीन भारत की एकता के निर्माण में सरदार पटेल के इन २७ भाषणों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्वाधीनता के पहले २½ वर्षों की भारतीय समस्याओं पर इन भाषणों में जो प्रकाश डाला गया है, उसका महत्त्व ऐतिहासिक है। ये भाषण देश के लिए चिरकाल तक प्रकाश स्तम्भ का काम देते रहेंगे।

इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और ऐतिहासिक ग्रन्थ का मूल्य प्रचार के उद्देश्य से बहुत कम रक्खा गया है। पुस्तक में ३५० बड़े आकार के पृष्ठों के अतिरिक्त १६ पृष्ठ सरदार पटेल के सुन्दर चित्र और नवीन भारत का एक मानचित्र भी दिया गया है।

मूल्य : सजिल्द ५) रुपया

प्रकाशक :

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,

ओल्ड सेक्रेटेरियट,

दिल्ली-८

Printed by the Albion Press, Kashmere Gate Delhi-6, and published on behalf of Community Projects Administration by the Publications Division, Delhi-8.